श्री समवसरण-विधान पूजा

प्रकाशक

श्री दिगम्बर जैन स्वाध्यायमन्दिर ट्रस्ट

सोनगढ-364250

भगवान श्री कुन्दकुन्द-कहान जैन शास्त्रमाला, पुष्प–२०७

श्री
समवसरण-विधान पूजा

प्राचीन कविवर श्री कुंवर लालजीमल रचित
'समवसरण पूजन विधान' आधारित
संक्षिप्त संस्करण

प्रकाशक
श्री दिगम्बर जैन स्वाध्यायमन्दिर ट्रस्ट
सोनगढ-३६४२५०

श्री दिगंबर जैन स्वाध्यायमंदिर ट्रस्ट, सोनगढ - ३६४२५०

प्रथम संस्करण : ३०००

वीर नि. सं. २५३२ वि. सं. २०६२ ई. स. २००६

श्री समवसरण-विधान पूजा (हिन्दी) के

❀ स्थायी प्रकाशन-पुरस्कर्ता ❀

श्री उपनगर दिगंबर जैन मुमुक्षु मंडल, मलाड (मुंबई)

(पूज्य गुरुदेवश्रीके महामंगलकारी 117वें जन्ममहोत्सवके उपलक्ष्यमें)

मूल्य : रू. 12=00

मुद्रक :

कहान मुद्रणालय

जैन विद्यार्थी गृह कम्पाउन्ड, सोनगढ-३६४२५०

✆ : (02846) 244081

Shri Digambar Jain Swadhyay Mandir Trust, Songadh - 364250

શ્રી દિગંબર જૈન સ્વાધ્યાયમંદિર ટ્રસ્ટ, સોનગઢ - ૩૬૪૨૫૦

પરમ પૂજ્ય અધ્યાત્મમૂર્તિ સદ્‌ગુરુદેવ શ્રી કાનજીસ્વામી

Shri Digambar Jain Swadhyay Mandir Trust, Songadh - 364250

प्रकाशकीय

अध्यात्मयुगस्रष्टा स्वात्मानुभवी सत्पुरुष पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामीने 'तीर्थंकरभगवन्तों द्वारा प्रकाशित दिगम्बर जैनधर्म ही सनातन सत्य है' ऐसा युक्ति-न्यायसे सर्वप्रकार स्पष्टरूपसे समझाया है; मार्गकी खूब छानबीन की है। द्रव्यकी स्वतन्त्रता, द्रव्य-गुण-पर्याय, उपादान-निमित्त, निश्चय-व्यवहार, आत्माका शुद्ध स्वरूप, सम्यग्दर्शन, स्वानुभूति, मोक्षमार्ग इत्यादि सब कुछ उनके परम प्रतापसे इस काल सत्यरूपसे बाहर आया है। इन अध्यात्मतत्त्वके रहस्योद्घाटनके साथ साथ उन्होंने वीतराग देव-शास्त्र-गुरुकी सही पहिचान देकर भी मुमुक्षु समाजके उपर अनन्त उपकार किया है। उन्हींके सत्प्रतापसे मुमुक्षु समाजमें जिनेन्द्रपूजा-भक्ति आदिकी साभिरुचि (सोल्लास) प्रवृत्ति नियमित चल रही है। स्वयं भी नियमितरूपसे जिनेन्द्रभक्तिमें उपस्थित रहते थे। उनके ही पुनीत प्रभावसे सौराष्ट्रप्रदेश दिगम्बर जिनमंदिरों एवं वीतराग जिनबिम्बोंसे भर गया।

परम पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामीके अनन्य भक्त प्रशममूर्ति धन्यावतार पूज्य बहिनश्रीके स्वानुभूतियुक्त सातिशय जातिस्मरणरूप ज्ञानवैभवके फलस्वरूप सुवर्णपुरीके भक्तोंको विदेहीनाथ श्री सीमंधर भगवानके समवसरणके दर्शनका महान सौभाग्य प्राप्त हुआ। पूज्य गुरुदेवश्रीका ११७वाँ जन्मजयंती महोत्सव मनानेका लाभ प्राप्त होनेसे मलाडके मुमुक्षुओंकों ऐसे भाव जागृत हुए की 'पूज्य गुरुदेवश्री और पूज्य माताजी को तो साक्षात् श्री सीमंधर भगवानके समवसरणमें जानेका लाभ मिल रहा है,' तो 'क्यों न हम सब इस पावन अवसर पर मंडपमें श्री विदेहीनाथ सीमंधर भगवानके समवसरणकी रचना कर समवसरणमें भगवानके दर्शन पूजनका लाभ प्राप्त करें!'

इस भावनाको मूर्तिमंत करने हेतु प्राचीन कविवर श्री कुंवर लालजीमल कृत ''श्री समवसरण पूजन विधान'' आधारित यह 'श्री समवसरण विधान पूजा' नामका संक्षिप्त संस्करण श्री दिगंबर जैन स्वाध्यायमंदिर ट्रस्ट, सोनगढ द्वारा प्रकाशित किया जा रहा है। इस विधानमें विविध सुंदर वर्णनयुक्त समवसरणकी पूजा है।

आशा है कि सुवर्णपुरी (सोनगढ़)में पूज्य गुरुदेवश्रीकी ११७वीं जन्मजयंतीके शुभ अवसर पर ''श्री समवसरण विधान पूजा''के प्रकाशनसे मुमुक्षु समाज अवश्य लाभान्वित होगा।

अल्पावधिमें यह पुस्तक मुद्रण करने हेतु ''कहान मुद्रणालय'' सोनगढके हम आभारी हैं।

पूज्य गुरुदेवश्रीका ११७वाँ
जन्मजयंती महोत्सव
वि. सं. २०६२

साहित्यप्रकाशन-समिति
श्री दि. जैन स्वाध्यायमन्दिर ट्रस्ट
सोनगढ

ॐ
સહજ ચિદાનંદ.

શ્રી દિગંબર જૈન સ્વાધ્યાયમંદિર ટ્રસ્ટ, સોનગઢ - ૩૬૪૨૫૦

प्रशममूर्ति पूज्य बहिनश्री चंपाबहिन

समवसरण-जिनवर तणो, दीधो दृष्ट चितार;
उरमां अमृत सींचीने, कर्यो परम उपकार,
सीमंधर-कुंदनी रे के वात मीठी लागे साहेलडी,
अंतरना भावमां रे के उज्ज्वळता जागे साहेलडी.

Shri Digambar Jain Swadhyay Mandir Trust, Songadh - 364250

अनुक्रमणिका

क्रम	विषय	पृष्ठ
१	पूजनकी प्रारंभिक विधि	१
२	श्री समवसरण विधान पूजा-प्रस्तावना	३
३	श्री समवसरण विधान पूजा-प्रारंभ समवसरण स्थित श्री वीस विद्यमान जिनपूजा	६
४	श्री समवसरण स्थित श्री चोंबीस-जिनपूजा	९
५	चतुर्दिश मानस्तंभ स्थित जिनपूजा	१६
६	विविध रचनायुक्त समवसरण स्थित जिनपूजा	२०
७	चैत्य (प्रथम) भूमि संयुक्त समवसरण स्थित जिनपूजा	२४
८	चैत्यभूमि चैत्यमंदिरस्थ जिनपूजा	२५
९	खातिका (द्वितीय) भूमि संयुक्त समवसरण स्थित जिनपूजा	२९
१०	पुष्पवाटिका (तृतीय) भूमि संयुक्त समवसरण स्थित जिनपूजा	३१
११	उपवन (चतुर्थ) भूमि संयुक्त समवसरण स्थित जिनपूजा	३२
१२	उपवन(चतुर्थ) भूमि चैत्यवृक्ष जिनपूजा	३५
१३	ध्वज(पंचम) भूमि संयुक्त समवसरण स्थित जिनपूजा	३९
१४	कल्पवृक्ष(षष्ठम) भूमि संयुक्त समवसरण स्थित जिनपूजा	४२
१५	कल्पवृक्ष भूमि भूप वृक्षस्थ जिनपूजा	४५
१६	भवन (सप्तम) भूमि संयुक्त समवसरण स्थित जिनपूजा	४९
१७	सप्तम भूमि स्तूप जिनपूजा	५१
१८	श्री मंडप (अष्टम) भूमि संयुक्त समवसरण स्थित जिनपूजा	५५
१९	श्री मंडप संयुक्त समवसरण जिनपूजा	६१
२०	श्री जिन मुखोद्भव दिव्यध्वनि पूजा	६५

क्रम	विषय	पृष्ठ
२१	समवसरण स्थित सर्वसाधु पूजा	६८
२२	समुच्चय जयमाला	७१
२३	श्री आदिनाथ-जिनपूजा	७५
२४	श्री महावीर-जिनपूजा	७८
२५	श्री धातकीविदेह-भाविजिनपूजा	८१
२६	स्वानुभूति-तीर्थ सुवर्णपुरी पूजा	८५
२७	अर्घावली	८९
२८	आरती	९२
२९	शान्तिपाठ-विसर्जन	९५

સહજ સુખ સાધન - સહજ ચિદાનંદ.

पूजनकी प्रारंभिक विधि

ॐ जय जय जय, नमोस्तु, नमोस्तु, नमोस्तु।

णमो अरिहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आयरियाणं,
णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्वसाहुणं।

ॐ ह्रीँ अनादिमूलमंत्रेभ्यो नमः

मंगल

चत्तारि मंगलं,—अरहंता मंगलं, सिद्धा मंगलं, साहू मंगलं, केवलिपण्णत्तो धम्मो मंगलं।

चत्तारि लोगुत्तमा—अरहंता लोगुत्तमा, सिद्धा लोगुत्तमा, साहू लोगुत्तमा, केवलिपण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमो।

चत्तारि सरणं पव्वज्ज्ञामि—अरहंते सरणं पव्वज्ज्ञामि, सिद्धे सरणं पव्वज्ज्ञामि, साहू सरणं पव्वज्ज्ञामि, केवलिपण्णत्तं धम्मं सरणं पव्वज्ज्ञामि।

।। पुष्पांजलि ।।

उदकचन्दनतन्दुलपुष्पकैश्चरुसुदीपसुधूपफलार्घकै;
धवलमंगलगानरवाकुले जिनगृहे जिननाथमहं यजे।

ॐ ह्रीँ श्रीसीमंधरतीर्थंकराय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

ॐ ह्रीँ श्रीपद्मप्रभाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

ॐ ह्रीँ श्रीशान्तिनाथाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

ॐ ह्रीँ श्रीनेमिनाथाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

ॐ ह्रीँ श्रीसमवसरणमध्यबिराजमानसीमंधरजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

ॐ ह्रीँ श्रीचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

ॐ ह्रीँ श्रीकुंदकुंदाचार्यदेवाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

ॐ ह्रीँ श्रीभगवज्जिनसहस्रनामेभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

देव-शास्त्र-गुरुनो अर्घ

जल परम उज्ज्वल गंध अक्षत पुष्प चरु दीपक धरुं,
वर धूप निर्मल फल विविध बहु जनमके पातक हरुं;
इह भांति अर्घ चढाय नित भवि करत शिव-पंकति मचूं,
अरहंत श्रुतसिद्धान्त गुरु–निरग्रंथ नित पूजा रचूं।

(दोहा)

वसुविधि अर्घ संजोयके, अति उछाह मन कीन,
जासों पूजों परमपद, देव शास्त्र गुरु तीन।

ॐ ह्रीँ श्रीदेवशास्त्रगुरुभ्यः अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री सीमंधर भगवाननो अर्घ

(शार्दूलविक्रीडितं)

दृष्टिज्ञानसुचारुदीप्रमणिना दीप्राः सदा शाश्वताः;
तीर्थेशा भवभावपाशरहिताः सीमंधराद्या जिनाः;
भव्यानां जयमालिकैककरणा विद्वेषिणा कर्मणः;
ये तेभ्यः प्रददामि मोक्षगमने यानं महार्घ्यं शूभम्।

ॐ ह्रीँ श्रीसीमंधरतीर्थंकराय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

समवसरण-विधान-पूजन

प्रस्तावना

(दोहा)

पञ्चपरमगुरु को नमों, मन वच शीश नवाय।
देओ मति मोकों विमल, पल पल करो सहाय॥

(अडिल्ल)

मोहकर्म जब नशे महादुखदाय जू।
होवे ज्ञानावरण छिनकमें क्षार जू॥
दर्शनावरण विलाय साथ ही साथ जू।
अन्तराय सह नशे परमपद पाय जू॥

(दोहा)

श्री जिनवर चौवीस को, समवसरण सुखदाय।
पूजा सरस सुहावनी, वरणों जिनगुण गाय॥
भविक प्रथम मण्डल रचे, ताकी विधि सुखकार।
सुनो भव्य मन लायके, जिनश्रुति के अनुसार॥

(सुन्दरी)

रचें मण्डल जे बुधिमन्त जी, प्रथम काम करे यों सन्त जी।
पाठ आदि व अन्त विलोक कें, करें भ्यास भली विध धोखकें॥

सहज बुद्धिसमान विचार के, परमप्रीति सु उरमें धारके।
सफल नरभव जे नर करत हैं, करमपुञ्ज सबै विध हरत हैं॥

तहँ सुमण्डल सुन्दर सोहनो, रचहिं याविध सों मन मोहनो।
रचें मण्डल जे वर भव्यजी, मति बढ़ावन जान अभङ्गजी॥

(अड्डिल)

चार घातिया घात, प्रगट केवल लयो।
जय जय जय जिनदेव, करमरिपु कों जयो॥

इन्द्र सुरग सौधर्म, सभामण्डप मही।
बैठो आनन्द मग्न, सिंहासन पर सही॥

अकस्मात तब मुकुट, आप ही, सों नयो।
अवधि विचारी इन्द्र सुजिन केवल लयो॥

धनद यक्ष बुलवाय, पास अपने लयो।
करो जाय जिनपूज, हुकम ऐसो दयो॥

त्रिभुवनपति जिनराज, सुकेवलनिधि लही।
समवसरण तुम जाय, परम रचियो सही॥

इन्द्र हुकुम को पाय, धनद आवत भयो।
जिनपद-कमल विलोक, भ्रमर ह्वै के रम्यो॥

श्री जिनवर को प्रथम, शीश नावत भयो।
दे प्रदक्षिणा तीन, परमसुख कों लयो॥

फेर नमत शिरनाय, हरष उर लायकें।
समवसरण की रचना, रचत बनायकें॥

नानाविध पुद्गल परमाणू मणिमई।
जगमग जगमग ज्योति, होत जग जय लई॥

सूत्रकार हैं सार, कुबेर बुलाय जी।
भाषे वर्णन कौन करे, कवि 'लाल' जी॥

भक्तिलीन कछु भाषत, भक्ति उपाय कें।
हँसो नहीं मतिमान, क्षमा उर लायके॥

श्रीजिनके गुण सार, पार को लहत है।
पूजत जे भवि पांय, कर्म अघ दहत हैं॥

(सोरठा)

समवसरण जिनठाट, बारह योजन आदि के।
आधो आधो घाटि, वाइस लों मुख वादि के॥

दो जिनवर शुभ ध्यान, समवसरण लक्ष्मी धरें।
योजन पाव सुपाव, दर्शन कोटिक अघ हरें॥

(अडिल्ल)

समवसरण की रचना सुन्दर कर तहां,
धनददेव मन माँहि विचार करे जहां;
मैं अपनी निज शक्ति तुल्य रचना करी,
फिर श्री जिनकी थुति निजमुख तें उच्चरी।

(वसंततिलका)

जगना अगाध तिमिरे प्रभु! सूर्य तुं छे,
अज्ञान–अंध जगनुं प्रभु! नेत्र तुं छे;
भवसागरे पतितनुं प्रभु! नाव तुं छे,
माता, पिता, गुरु, जिनेश्वर! सर्व तुं छे।

तीर्थंकरो जगतना जयवंत वर्तो,
ॐकारनाद जिननो, जयवंत वर्तो;
जिननां समोसरण सौ जयवंत वर्तो,
ने तीर्थ चार जगमां जयवंत वर्तो।

❋ ❋ ❋

समवसरण विधान पूजा प्रारंभ

समवसरण स्थित श्री बीस विद्यमान जिनपूजा

(दोहा)

दायक यश जय सुमति सुग, सुख दुतिरूप अपार,
घायक विधि घायकनिके लायक जग उद्धार।
सीमंधर आदिक सकल, वियद बाहु मित ऐन,
आह्वाहन त्रिविधा करुं, इत तिष्ठहु सुख दैन।

ॐ ह्रीँ श्री सीमंधरादिक–अजितवीर्यपर्यंतविदेहक्षेत्रस्थितवर्तमान विंशति जिनेन्द्राः। अत्र अवतर अवतर, संवौषट्।

ॐ ह्रीँ श्री सीमंधरादिक–अजितवीर्यपर्यंतविदेहक्षेत्रस्थितवर्तमान विंशति जिनेन्द्राः। अत्र तिष्ठत तिष्ठत, ठः ठः।

ॐ ह्रीँ श्री सीमंधरादिक–अजितवीर्यपर्यंतविदेहक्षेत्रस्थितवर्तमान विंशति जिनेन्द्राः। अत्र मम सन्निहितो भवत भवत, वषट्।

(रुचिरा)

शीतल सलिल अमल तृषहारक, लेय सुधासम भृगभरं,
जिनपति चरन अग्र त्रय धारा, धरुं ताप त्रय नाशकरं,
जय कमलासन सुंदर शासन, भासन नभद्वय बोधवरं,
श्रीधर श्रीसीमंधर आदिक, यजूं बीस जिन श्रेयकरं।

ॐ ह्रीँ श्री सीमंधरादिक–विदेहक्षेत्रस्थ–वर्तमान–विंशतिजिनेन्द्रेभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा।

मलय पटीर घसित वरकुंकुम, शीतल गंध सुरंग भयो,
सारस वरन चरन तव धारत, आकुल दाह अपार हर्यो। जय०

ॐ ह्रीँ श्री सीमंधरादिक–विदेहक्षेत्रस्थ–वर्तमान–विंशतिजिनेन्द्रेभ्यो चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

जीरक श्याम सुगंधित तंदुल, श्वेत वरन वर अनियारे,
लहि अक्षत अक्षतपद पावन, धरुं पूंज दृढ मनहारे।
जय कमलासन सुंदर शासन, भासन नभद्वय बोधवरं,
श्रीधर श्रीसीमंधर आदिक, यजूं बीस जिन श्रेयकरं ॥

ॐ ह्रीँ श्री सीमंधरादिक–विदेहक्षेत्रस्थ–वर्तमान–विंशतिजिनेन्द्रेभ्यो अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

केतकि कंज गुलाब जुही वर, सुमन सुवासित मनहारी,
धारत चरन लहें समतासर, नशें, मदनसर दुखकारी। जय०

ॐ ह्रीँ श्री सीमंधरादिक–विदेहक्षेत्रस्थ–वर्तमान–विंशतिजिनेन्द्रेभ्यो पुष्पं निर्व०

विंजन विविध छहों रस पूरित, सद्य सुसुंदर बलकारी,
श्रीपति चरन चढाऊँ चरु वर, निज बलदायक क्षुतहारी। जय०

ॐ ह्रीँ श्री सीमंधरादिक–विदेहक्षेत्रस्थ–वर्तमान–विंशतिजिनेन्द्रेभ्यो नैवेद्यं०

प्रजलित ज्योति कपूर मनोहर, अथवा पूरित स्नेह वरं,
करत आरती हरि भव आरति, निज गुण जोति प्रकाशकरं। जय०

ॐ ह्रीँ श्री सीमंधरादिक–विदेहक्षेत्रस्थ–वर्तमान–विंशतिजिनेन्द्रेभ्यो दीपं०

चूरित अगर पटीरादिक वर, गंध हुताशन संग धरुं,
खेऊं धूप जगेशचरन ढिग, चाहत हूँ विधि नाश करुं। जय०

ॐ ह्रीँ श्री सीमंधरादिक–विदेहक्षेत्रस्थ–वर्तमान–विंशतिजिनेन्द्रेभ्यो धूपं०

फल दाडम केला पिकवल्लभ, खारिक आदिक मिष्ट भले,
लेकर चरन चढावत जिनके, पावत हूँ फल मोक्ष रले। जय०

ॐ ह्रीँ श्री सीमंधरादिक–विदेहक्षेत्रस्थ–वर्तमान–विंशतिजिनेन्द्रेभ्यो फलं०

जल चंदन अक्षत मनसिजशर, चरु दीपक वर धूप फलं,
भवगदनाशन श्रीपतिके पद, वारत हूँ करि अर्घ भलं। जय०

ॐ ह्रीँ श्री सीमंधरादिक–विदेहक्षेत्रस्थ–वर्तमान–विंशतिजिनेन्द्रेभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

(त्रोटक)

महासुख सागर आगर ज्ञान, अनंत सुखामृत मुक्त महान,
महाबल मंडित खंडित काम, रमा शिव संगसदा विसराम। १

सुरिंद फनिंद खगिंद नरिंद, मुनिंद जजें नित पादारविंद,
प्रभु तुम अंतरभाव विराग, सुबालहितै व्रत शीलसों राग। २

कियो नहि काज उदाससरूप, सुभावन भावत आतमरूप,
अनित्य शरीर प्रपंच समस्त, चिदातम नित्य सुखाश्रित वस्त। ३

अशर्न नहिं कोउ शर्न सहाय, जहां जिय भोगत कर्म विपाय,
निजातमके परमेसुर शर्न, नहीं इनके विन आपद हर्न। ४

जगत जथा जल बुदबुद येव, सदा जिय एक लहे फलमेव,
अनेक प्रकार धरी यह देह, भमें भवकानन आनन नेह। ५

अपावन सात कुधात भरीय, चिदातम शुद्ध सुभाव धरीय,
धरे इनसों जब नेह तबेव, सुआवत कर्म तबै वसुभेव। ६

जबै तन भोग जगत उदास, धरे तब संवर निर्जर आस,
करे जब कर्म कलंक विनाश, लहे तब मोक्ष महा सुखरास। ७

तथा यह लोक नराकृत नित्त, विलोक्यते षटद्रव्य विचित्त,
सुआतम जानन बोधविहीन, धरे किम तत्त्व प्रतीत प्रवीन। ८

जिनागम ज्ञान रु संजमभाव; सबै निजज्ञान विना विरसाव,
सुदुर्लभ द्रव्य सुक्षेत्र सुकाल, सुभाव सबै जिहतें शिवहाल। ९

लयो सब जोग सुपुन्य वसाय, कहो किमि दीजिये ताहि गंवाय,
विचारत यों लौकांतिक आय, नमे पदपंकज पुष्प चढाय। १०

कह्यो प्रभु धन्य कियो सुविचार, प्रबोधि सुयेम कियो जु विहार,
तबै सौधर्मतनों हरि आय, रच्यो शिबिका चढि आप जिनाय। ११

धरै तप पाय सुकेवलबोध, दियो उपदेश सुभव्य संबोध,
लियो निजज्ञान महासुखराश, नमें नित भक्त सोई सुखआश। १२

ॐ ह्रीँ भगवान श्री सीमंधरनाथजिनेन्द्रदेवाय चरणकमलपूजनार्थे अनर्घपदप्राप्तये महार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

❁

श्री समवसरणस्थित श्री चौबीस–जिनपूजा

(अडिल्ल)

अंतरीक्ष जिनराज विराजित है सही,
गगन विषै भगवान वचन निश्चय कही;
निराधार जिनदेव बिराजत हैं तहीं,
दास धन्य तिन भाग्य दरश जिन तह लहीं।

ॐ ह्रीं श्री समवसरण मध्ये बिराजमान श्री जिनेन्द्रदेव ! अत्र अवतर अवतर संवौषट्। ॐ ह्रीं श्री समवसरण मध्ये बिराजमान श्री जिनेन्द्रदेव ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं। ॐ ह्रीं श्री समवसरण मध्ये बिराजमान श्री जिनेन्द्रदेव ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं।

(चाल नंदीश्वर पूजाकी)

जल पद्मदहको सार कंचन भृंग भरा,
जिन चरनन देत चढाय मेटौ जन्म-जरा;
चौवीसों श्री जिनचंद जगमें श्रेय करो,
प्रभु दीजै निज निधि साज मम उर आस भरो।

ॐ ह्रीं समवसरण मध्ये बिराजमान श्री ऋषभ, अजित, संभव, अभिनंदन, सुमति, पद्मप्रभ, सुपार्श्व, चंद्रप्रभ, शीतल, श्रेयांस, वासुपूज्य, विमलनाथ, अनंतनाथ, धर्मनाथ, शांतिनाथ, कुंथुनाथ, अरहनाथ, मल्लिनाथ, मुनिसुव्रत, नमिनाथ, नेमिनाथ, पार्श्वनाथ तथा वर्द्धमान जिनेन्द्राय चरणकमल पूजनार्थे जलं निर्वपामीति स्वाहा।

भवताप अधिक दुखदाय, सो तुम नाश करो,
मैं पूजूं चंदन लाय स्वगुण प्रकाश करो;
चौवीसों श्री जिनचंद जगमें श्रेय करो,
प्रभु दीजै निज निधि साज मम उर आस भरो।

ॐ ह्रीं समवसरण मध्ये बिराजमान श्री जिनेन्द्रदेव पूजनार्थे चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

शुचि अक्षत स्वच्छ महान जिनपद अग्र धरौ,
निज अक्षय गुन पहिचान, स्वहित प्रकाश करौ;
चौवीसों श्री जिनचंद जगमें श्रेय करो,
प्रभु दीजै निज निधि साज मम उर आस भरो।

ॐ ह्रीं समवसरण मध्ये बिराजमान श्री जिनेन्द्रदेव पूजनार्थे अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

जिन जीते काम करुर तिन पद श्रेय करुं,
प्रभु यह गुण देहु जरुर, पुष्प सुभेंट धरुं;
चौवीसों श्री जिनचंद जगमें श्रेय करो,
प्रभु दीजै निज निधि साज मम उर आस भरो।

ॐ ह्रीं समवसरण मध्ये बिराजमान श्री जिनेन्द्रदेव पूजनार्थे पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

शुचि नेवज विविध बनाय, जिनपद अग्र धरुं,
सब दोष क्षुधा निरवार, निजगुण प्रगट करुं;
चौवीसों श्री जिनचंद जगमें श्रेय करो,
प्रभु दीजै निज निधि साज मम उर आस भरो।

ॐ ह्रीं समवसरण मध्ये बिराजमान श्री जिनेन्द्रदेव पूजनार्थे नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तुम ज्ञान ज्योति परकाश, लोकालोक लखै,
मैं पूजूं दीपकधार, दीजै ज्ञान अखै;
चौवीसों श्री जिनचंद जगमें श्रेय करो,
प्रभु दीजै निज निधि साज मम उर आस भरो।

ॐ ह्रीं समवसरण मध्ये बिराजमान श्री जिनेन्द्रदेव पूजनार्थे दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

बहु धूप सुगंध अनूप, प्रभु सनमुख लावौ,
दहि कर्मकाण्ड दुखरूप शिव सुंदरि पावौ;
चौवीसों श्री जिनचंद जगमें श्रेय करो,
प्रभु दीजै निज निधि साज मम उर आस भरो।

ॐ ह्रीं समवसरण मध्ये बिराजमान श्री जिनेन्द्रदेव पूजनार्थे धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

तुम शिवफलदायक सार, मुनिजन इम गावे,
जिन चरन अग्र फल धार, भविजन शिव पावै;
चौवीसों श्री जिनचंद जगमें श्रेय करो,
प्रभु दीजै निज निधि साज मम उर आस भरो।

ॐ ह्रीं समवसरण मध्ये बिराजमान श्री जिनेन्द्रदेव पूजनार्थे फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल फल वसु द्रव्य मिलाय अर्ध बनावत है,
पद पूजत श्री जिनराय, दिव शिव पावत है;
चौवीसों श्री जिनचंद जगमें श्रेय करो,
प्रभु दीजै निज निधि साज मम उर आस भरो।

ॐ ह्रीं समवसरण मध्ये बिराजमान श्री जिनेन्द्रदेव पूजनार्थे अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रत्येक अर्घ

वीतराग सर्वज्ञ है, उपदेशक हितकार।
सत्यारथ परमाणकर, अन्य सुगति दातार॥

ॐ ह्रीं समवसरण मध्ये बिराजमान श्री ऋषभ जिनेन्द्राय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

अन्तर–बाहिर शत्रुको निमिष परै नहीं जोर।
विजय लक्ष्मी नाथ हो पूजूं द्वय कर जोर॥

ॐ ह्रीं समवसरण मध्ये बिराजमान श्री अजित जिनेन्द्राय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

मोह सुभटकूं पटकियो, तीनलोक परशंस।
श्रेष्ठ पुरुष तुम जगतमें कियो कर्म विध्वंश॥

ॐ ह्रीं समवसरण मध्ये बिराजमान श्री संभव जिनेन्द्राय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

परम सुखी तुम आप हो, पर आनंद कराय।
तुमको पूजत भावसों, मोक्ष लक्ष्मी पाय॥

ॐ ह्रीं समवसरण मध्ये बिराजमान श्री अभिनन्दन जिनेन्द्राय अर्घम् निर्वपामीति०

सब कुवादि एकांतको, नाश कियो छिन माहि।
भविजन मन संशयहरण, और लोकमें नाहि॥

ॐ ह्रीं समवसरण मध्ये बिराजमान श्री सुमति जिनेन्द्राय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

भविजन मधुकर कमल हो, धरत सुगंध अपार।
तीन लोकमें विस्तरी, सुयश नाम का धार॥

ॐ ह्रीं समवसरण मध्ये बिराजमान श्री पद्मप्रभ जिनेन्द्राय अर्घम् निर्वपामीति०

पारस लोहा हेम करि, तुम भवबंध निवार।
मोक्ष हेतु तुम श्रेष्ठ गुण, धारत हो हितकार॥

ॐ ह्रीं समवसरण मध्ये बिराजमान श्री सुपार्श्वनाथ जिनेन्द्राय अर्घम् निर्वपामीति०

तीन लोक आताप हर, मुनि-मन-मोदन चन्द।
लोकप्रिय अवतार हो, पाऊं सुख तुम वन्द॥

ॐ ह्रीं समवसरण मध्ये बिराजमान श्री चन्द्रप्रभ जिनेन्द्राय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

मन मोहन सोहन महा, धारै रूप अनूप।
दरशत मन आनन्द हो, पायो निज रस कूप॥

ॐ ह्रीं समवसरण मध्ये बिराजमान श्री पुष्पदंत जिनेन्द्राय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

भव भव दाह निवार कर, शीतल भए जिनेश।
मानो अमृत सींचियो, पूजत सदा सुरेश॥

ॐ ह्रीं समवसरण मध्ये बिराजमान श्री शीतलनाथ जिनेन्द्राय अर्घम् निर्वपामीति०

तीर्थंकर श्रेयांस हम देहो श्री शुभ भाग।
श्रीसु अनन्त चतुष्ट हो, हरो सकल दुरभाग॥

ॐ ह्रीं समवसरण मध्ये बिराजमान श्री श्रेयांसनाथ जिनेन्द्राय अर्घम् निर्वपामीति०

त्रस नाडी या लोकमें, तुम ही पूज्य प्रधान।
तुमको पूजत भावसों, पाऊं सुख निरवाण॥

ॐ ह्रीं समवसरण मध्ये बिराजमान श्री वासुपूज्य जिनेन्द्राय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

द्रव्य भाव मल रहित है, महा मुनिन के नाथ।
इन्द्रादिक पूजत सदा, नमूं पदांबुज माथ॥

ॐ ह्रीं समवसरण मध्ये बिराजमान श्री विमलनाथ जिनेन्द्राय अर्घम् निर्वपामीति०

निज आश्रय निर्विघ्न नित, निज लक्ष्मी भंडार।
चरणाम्बुज नित नमत हम, पुष्पांजलि शुभ धार॥

ॐ ह्रीं समवसरण मध्ये बिराजमान श्री अनंतनाथ जिनेन्द्राय अर्घम् निर्वपामीति०

अनागार आगार के, उद्धारक जिनराज।
धर्मनाथ प्रणमूं सदा, पाऊं शिवसुख साज॥

ॐ ह्रीं समवसरण मध्ये बिराजमान श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

शांतिरूप पर शांतिकर, कर्म दाह विनिवार।
शांति हेतु वन्दू सदा, पाऊं भवदधि पार॥

ॐ ह्रीं समवसरण मध्ये बिराजमान श्री शांतिनाथ जिनेन्द्राय अर्घम् निर्वपामीति०

क्षुद्र वीर्य सब जीव के, रक्षक है तीर्थेश।
शरणागत प्रतिपालकर, ध्यावैं सदा सुरेश॥

ॐ ह्रीं समवसरण मध्ये बिराजमान श्री कुन्थुनाथ जिनेन्द्राय अर्घम् निर्वपामीति०

पूजनीक सब जगत के, मंगलकारक देव।
पूजत हैं हम भावसों, विनशै अघ स्वयमेव॥

ॐ ह्रीं समवसरण मध्ये बिराजमान श्री अरनाथ जिनेन्द्राय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

मोह काम भट जीतियो, जिन जीतो सब लोक।
लोकोत्तम जिनराजके, नमू चरण दे धोक॥

ॐ ह्रीं समवसरण मध्ये बिराजमान श्री मल्लिनाथ जिनेन्द्राय अर्घम् निर्वपामीति०

पंच पापको त्याग करि, भव्य जीव आनन्द।
भये जासु उपदेशतें, पूजत हूँ पद वृन्द॥

ॐ ह्रीं समवसरण मध्ये बिराजमान श्री मुनिसुव्रत जिनेन्द्राय अर्घम् निर्वपामीति०

सुरनर मुनि नित नमन करि जान धरम अवतार।
तिनको पूजूं भावयुत, लहूँ भवार्णव पार॥

ॐ ह्रीं समवसरण मध्ये बिराजमान श्री नमिनाथ जिनेन्द्राय अर्घम् निर्वपामीति०

नेम धर्ममें नित रमें, धर्मधुरा भगवान।
धर्मचक्र जगमें फिरे, पहुँचावे शिव थान॥

ॐ ह्रीं समवसरण मध्ये बिराजमान श्री नेमिनाथ जिनेन्द्राय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

हो देवाधिदेव तुम, नमत देव चउ भेव।
धरो अनन्त चतुष्टपद, परमानन्द अभेव॥

ॐ ह्रीं समवसरण मध्ये बिराजमान श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय अर्घम् निर्वपामीति०

आत्मिक जिन गुण लिये, दीप्ति सरुप अनूप।
स्वयं ज्योति परकाशमय, बन्दत हूँ शिवभूप॥

ॐ ह्रीं समवसरण मध्ये बिराजमान श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

(चौपाई)

क्षुधा तृषा न भयाकुल जास, जनम न मरन जरादिक नाश;
इंद्रिविषय विषाद न होय, विस्मय आठ मदहि नहि कोय।
राग रु दोष मोह नहि रंच, चिंता श्रम निद्रा नहि पंच;
रोग बिना परस्वेद न दीस, इन दूषन विन है जगदीश।

ॐ ह्रीँ अठारह दोष रहित अरिहंत देव जिनेन्द्राय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

(दोहा)

तीर्थंकर त्रिभुवनतिलक, तारन तरन जिनंद;
तास चरन वंदन करौ, मनधर परमानंद।

गुण छियालीस संयुगत, दोष अठारह नाश;
ये लक्षण जा देवमें, नित प्रति वंदों तास।

(चौपाई)

दश गुण जासु जनमतैं होय, प्रस्वेदादिक दोष न होय;
निर्मलता मलरहित शरीर, उज्ज्वल रुधिर वरण जिम खीर।

वज्र वृषभ नाराच प्रमान, सम सु चतुर संस्थान बखान;
शोभनरूप महा दुतिवन्त, परम सुगन्ध शरीर वसंत।

सहस अठोत्तर लच्छन जास, बल अनंत वपु दीखै तास;
हितमित वचन सुधासे झरैं, तास चरन भवि वंदन करैं।

दश गुण केवल होत प्रकाश, परम सुभिक्ष चहूं दिश भास;
द्वय सौ जोजन मान प्रमान, चलत गगनमें श्री भगवान।

वपुतैं प्राणिघात नहि होय, आहारादिक क्रिया न कोय;
विन उपसर्ग परम सुखकार, चहुंदिश आनन दीखहिं चार।

सब विद्या स्वामी जग वीर, छाया वर्जित जासु शरीर;
नख अरु केश बढै नही कहीं, नेत्र पलक पल लागे नहीं।

चौदह गुण देवन कृत होय, सर्व मागधी भाषा सोय;
मैत्री भाव जीव सब धरैं, सर्वकाल तरु फलन झरैं।

दर्पणवत् निर्मल ह्वै मही, समवसरण जिन आगम कही;
शुद्ध गंध दक्षिण चल पौन, सर्व जीव आनंद अनुमौन।

धूलि रु कंटक वर्जित भूमि, गंधोदक बरसत है झूमि;
पद्म उपरि नित चलत जिनेश, सर्व नाज उपजहिं चहुं देश।

निर्मल होय आकाश विशेष, निर्मल दशा धरतु है भेष;
धर्मचक्र जिन आगे चलैं, मंगल अष्ट पाप तम दलै।

प्रातिहार्य वसु आनंदकंद, वृक्ष अशोक हरै दुःख द्वंद;
पुहुप वृष्टि शिव सुखदातार, दिव्यध्वनि जिन जै जै कार।

चौसठ चँवर ढरहिं चहु ओर, सेवहि इन्द्र मेघ जिन मोर;
सिंहासन शोभत दुतिवंत, भामंडल छबि अधिक दिपंत।

वेदी माहि अधिक द्युति धरैं, दुंदुभि जरा मरण दुःख हरै;
तीन छत्र त्रिभुवन जयकार, समवशरणको यह अधिकार।

(दोहा)

ज्ञान अनंतमय आतमा, दर्शन जासु अनंत;
सुख अरु वीर्य अनंत बल, सो वंदो भगवंत।

श्री जिनगुण छयालीस की, माला रची बनाई;
सो पहिरे भविकंठमें नित नित मंगल दाई।

ॐ ह्रीं समवसरण मध्ये बिराजित श्री ऋषभादि वीरान्तेभ्यः चर्तुविंशति जिनेन्द्राय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

(अडिल्ल)

जो वांचे यह पाठ सरस मन लाइकै,
सुने भव्य दे कान सुमन हरषाइकै;
धन धान्यादिक पुत्र पौत्र संपति धरै,
नर सुरके सुख भोगी बहुरि शिवतीय वरै।

॥ इत्याशीर्वाद ॥

*

चर्तुदिश मानस्तंभ स्थित जिनपूजा

फिर सिवान पर चढ सुरपति तहां पेखिये,
धूलीशाल सु कोट नयन भरि देखिये;
विजय नाम दरवाजे भीतर जायके,
मानस्तंभ जिनेश जजै हरखायके।

(अनुष्टुप)

धूलीशाल महीं आघे, चार छे मानस्तंभ त्यां;
स्वर्णना ने अति ऊंचा, मानीना मान गाळता।

(स्त्रग्धरा)

चामरने छत्र राजे, ध्वज पण फरके, भव्यने जे निमंत्रे,
घंटा वाजिंत्र वागे, सुरपतिकरथी चैत्यप्रक्षाल थाये;
चोबाजु चार वापी स्फटिक तटवती निर्मला नीरवाळी,
क्यारे ए मानस्तंभे लळी लळी प्रणमुं, गर्वने सर्व गाळी?

(गीता)

महा पावन बहु सुहावन समवसरण भूमि जानिये,
तहां मानस्तंभ लखते मान मानिन हानिये;
तासु मूल जिनेश प्रतिमा देखि हरि पूजा करी,
करतो आह्वानन दास प्रभु इत आय अब तो पग धरी।

(दोहा)

चौदिश मानस्तंभ की, जिन प्रतिमा शिर नाय;
करत आह्वानन जोरि कर, तिष्ठ तिष्ठ इत आय।

ॐ ह्रीं मानस्तंभ मध्ये बिराजमान श्री जिनेन्द्रदेव ! अत्र अवतर अवतर ! संवौषट् ! इत्याह्वाननं। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं। अत्र मम सन्निहितो भव भव ! वषट् इति सन्निधिकरणं।

(त्रोटक)

शुचि नीरहि गंग नदी भरीये अरु कुंभन प्रासुकके करिये,
चतुर दिश मानस्तंभ कहा, हरि पूजि जिनेश्वर हर्ष लहा।

ॐ ह्रीं मानस्तंभ मध्ये बिराजमान श्री जिनेन्द्र देवाय जन्म जरा मृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

मलयागिरि चंदन लेहु खरो, घसि कुंकुम मिश्रित कुंभ भरो,
चतुर दिश मानस्तंभ कहा, हरि पूजि जिनेश्वर हर्ष लहा।

ॐ ह्रीं मानस्तंभ मध्ये बिराजमान श्री जिनेन्द्र देवाय संसारताप विनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

शुभ जिरक श्याम अखंड लियो, परछालित थार हि हेम कियो,
चतुर दिश मानस्तंभ कहा, हरि पूजि जिनेश्वर हर्ष लहा।

(अक्षतान्)

वर बेल चमेली जुही नवरी, कमलादिक लै भरु थाल भरी,
चतुर दिश मानस्तंभ कहा, हरि पूजि जिनेश्वर हर्ष लहा।

(पुष्पं)

खुरमा खुझला वर मोदक जू, रसपूर क्षुधागद खोदकजू,
चतुर दिश मानस्तंभ कहा, हरि पूजि जिनेश्वर हर्ष लहा।

(नैवेद्यं)

कदलीसुत औ घृतके दियरा, जिन होत उद्योत तमा विदरा,
चतुर दिश मानस्तंभ कहा, हरि पूजि जिनेश्वर हर्ष लहा।

(दीपं)

वर धूप लई दशगंध खरी, जसु गंध लहे अलि नृत्य करी,
चतुर दिश मानस्तंभ कहा, हरि पूजि जिनेश्वर हर्ष लहा।

(धूपं)

सहकार अनार छुहार खरे, नरियार बदामहि थार भरे,
चतुर दिश मानस्तंभ कहा, हरि पूजि जिनेश्वर हर्ष लहा।

(फलं)

जल आदिक आठहु द्रव्य लिया, इकठी भरि थारहि अर्घ कीया,
चतुर दिश मानस्तंभ कहा, हरि पूजि जिनेश्वर हर्ष लहा।

ॐ ह्रीं मानस्तंभ मध्ये बिराजमान श्री जिनेन्द्र देवाय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

(त्रिभंगी)

दिश चारि सुहावन अति ही पावन मन हुलसावन जान कही,
लखि मानस्तंभा होत अचम्भा तहं जिनबिंबा पूज चही;
सुरपति सुर हुजे जिन पद पूजे आनंद हुजै मोद लही,
खग नर मुनि आवै पूज रचावै जिन गुण गावै दास तही।

(पद्धडी)

जै मानस्तंभ कह्यो बखान, तिन नमन करों जुग जोरि पान,
है ताको वर्णन अति विशाल, जिहि सुनत कालिमा जात काल।

जै पहली गली के बीच मांहि, दरवाजे चारि तहां बताहि,
तहं तीन कोट कीन्हें बखान तिनपाहि ध्वजा लहरैं महान।

आभ्यन्तर तीजे कोट जान, तह तीन पीठ कीन्हीं बखान,
सो त्रै कटनीयुत शोभकार, वैडूर्य मणिनकी कांति धार।

ता उपर मानस्तंभ जान है मूल मांहि चौकोर वान,
है उपर गोलाकार रूप दैदीप्यमान शोभित अनूप।

प्रति मानस्तंभ की दिशन चारि, है चारि बावरी पूरी वारि,
है नीर मांहि नीरज कुलान, मानहु निज नैना भू-खुलान।

जिनराज विभव देखन अपार, बहु नैन धारी कीन्हों शिंगार,
इक वापीके संग कह्यो गाय, द्वै कुंड जडित मणि शोभदाय।

है शोभा वैभव जो महान तिहि कौन सकै कवि करि बखान,
मानस्तंभ मूलहि दिशन चार, प्रतिमा श्री जिनवर की निहार।

तिन पूज्यो सुरपति हर्ष धार, करि नृत्य ताल स्वरको सम्हार,
जा लखतै मानिन मान जात जुग हाथ जोर शिर को नवात।

तासों मानस्तंभ जान नाम, सार्थक कीन्हो शोभाभिराम,
जिम पूरव दिश की है कहाहि, तिमि दक्षिण पश्चिम उत्तराहि ।
तिन कन्हइलाल सुत जोरि हाथ, भगवानदास नमै नाय माथ ।

(दोहा)

श्री जिन मानस्तंभकी गुनमाला सुविशाल,
जो नर पहिरे कंठमें सुरशिव पावे हाल ।

ॐ ह्रीं मानस्तंभ मध्ये बिराजमान श्री जिनेन्द्र देवाय जयमाला पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

(अडिल्ल)

जो वांचै यह पाठ सरस मन लायके,
सुनै भव्य दे कान सुमन हरखायके;
धन धान्यादिक पुत्र पौत्र संपति वरै,
नर सुर के सुख भोग बहुरि शिवतिय वरै ।

॥ इत्याशीर्वादः ॥

विविध रचनायुक्त समवसरण स्थित जिनपूजा

अर्घ

(अडिल्ल)

समवसरण जिनराज तनी रचना करी;
आगम उक्ति प्रमाण धनद निज कर करी,
करि रचना बहु भांति परम सुख पायके,
उद्यम पूजन कियो नाथ गुण गायके ।

धनुष हजार सु पांच ऊँचाई जानिये,
प्रथम भूमिते चढ़कर ऊपर मानिये;
विजय नाम दरवाजे सुंदर सोहनो,
ता आगे है चौक परम मन मोहनो ।

ॐ ह्रीं समभूमितें पांच हजार धनुष ऊंचे समवसरण मध्ये बिराजमान जिनेन्द्राय पूजनार्थे अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा ।

ऊपजे नाहीं खेद सिवानन पर चढै,
छिनक मांहि चढि जायसु जिन अतिशय बढै;
इन्द्रनील मणि गोल सिला तहां देखिये;
वृषभदेवके जोजन बारह पेखिये।

ॐ ह्रीं समवसरणकी शोभा रचना झलक रही है, ऐसी निर्मल शीला संयुक्ताय अतिशययुक्त समवसरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

(शार्दूलविक्रीडित)

धूलिशाल विशाल, कंकण समो, घेरे समोसर्णने,
देवे वर्ण विविधना रतननी रजथी रच्यो जेहने,
रत्नोना बहुरंगना किरणनी ज्योति अति विस्तरे,
आ शुं मेघधनुष भूमि उतर्युं सेवे जगत्तातने!

ॐ ह्रीं धूलिशाल कोट संयुक्त समवसरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घम् निर्वपामीति०

(काव्य)

दरवाजे हैं चार कोट के नाम सुनीजे,
विजय जान वैजयंत जयंत अपराजित लीजे;
बने कंगूरा बुरज बैठके अति सुखदाई,
भविक जीव जहां बैठि विलोके दश दिश भाई।
तीन लोक आकार कहू दिसै सुनिहारे,
अधोलोक चित्राम नरक दुःख तहाँ विचारै;
भविक देख चित्राम पाव सो तुरत ही भागे,
तीन लोकमें धर्मसार तासों चित लागे।

ॐ ह्रीं चार दिशा चार दरवाजे तथा चित्राम सहित धूलिशाल कोट संयुक्त समवसरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

(छप्पय)

शिला बनी सुविशाल सीढि ते सूधी जानो,
चार वीथि दिश चार वृषभ जिनके इम मानो;

चौडी कोस जु एक, कोस तेइस जु लांबी,
दोऊ तरफ सुजान बीथिके वेदी भाखी।

ॐ ह्रीं वीथि वेदी संयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

(अडिल्ल)

चार विथि के बीच चार अंतर पडै,
चार कोट अरु वेदी पांच बनै खरै;
इन नव के अंतर वसु भूमि निहारिये,
शिला अन्तमें धूलीशाल विचारिये।

ॐ ह्रीं चार कोट पांच वेदी संयुक्त समवसरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घम्०

चार कोट अरु वेदी पांच प्रमानिये,
एक तरफके दरवाजे नौ जानिये;
जिन शरीरसे बारह गुने तुंग विचारिये,
शोभै परम विशाल कांतिकर लहलहे।
तिनमें रतनमई तोरन शोभै जहां,
रतनमाल अरु फूलमाल घंटा जहां;
तिन दरवाजन में जु किवाड रतन जडे,
जगमग जोत विलोक सुरी नाचै खडी।

ॐ ह्रीं अनेक वैभव सहित दरवाजे संयुक्त समवसरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घम्०

(सवैया ३१ सा)

चमर छत्र झारी और कलशा बने विशाल,
धुजा बीजना औ ठोना आरसी सु जानिये,
मंगल सु द्रव्य सार नाम कहे सुधार,
एकसौ रु आठ एक एक को प्रमानिये।

(दोहा)

पांडु काल महाकालये मानव पद्म सु जानि।
पिंगल संख सु रतन सब, नैसर्पन परमान॥

ॐ ह्रीं मंगल द्रव्य नवनिधि संयुक्त समवसरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घम्०

(अडिल्ल)

तहां कंचनमई जड़ित सु परदा देखिये,
ता ऊपर घट जानि धूप को पेखिये।
धूप सुगंध प्रवाह सु निकसत धाय के,
मानो मेघ घटा झुक रही सु आय के।
उठी धूमकी घटा चली आकाशको,
रहे सु अलिगन झूमि लहें शुभवास को।
नाना विध शुभ गंध धुंआ लिए सही,
कर्म काठ जिम दहै मनो निकसी वही।

ॐ ह्रीं धूप घट सहित द्वार संयुक्त समवसरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घम्०

(सव्वैया ३१ सा)

भूमि चैत्य परसाद प्रथम वेदी सु जान,
भूमि खातिका प्रमान दूजी वेदी आनिये।
पुष्प वाटिका सु भूमि आगे कोट दूसरो सु,
चौथी उपवन भूमि तीजी वेदी ठानिये।
पांचमी धूजा सु भूमि कोट तीसरो निहार,
कल्पवृक्ष भूमि छठी वेदी चौथी मानिये।
सातमी सु भूमि मंदिरन की सु चौथी कोट,
फटकके रंग आगे सभा भूमि जानिये।

(दोहा)

वेदी पंचम जानिये ताके आगे सार,
चार कोट वेदी पन अंतराल वसु धार।

ॐ ह्रीं वेदी पांच, कोट चार, अंतराल आठ इन विषैं नाना प्रकारके चित्राम है। अनेक रचना संयुक्त समवसरण संस्थित जिनेन्द्राय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

*

चैत्य (प्रथम) भूमि संयुक्त समवसरण स्थित जिनपूजा

(शिखरिणी)

भूमि छे त्यां दैवी जिनगृह तणी पावन महा,
घणा मंदिरो ज्यां अतिशय मनोरम्य रचना।
मनुष्यो देवो त्यां प्रभु भजनने नृत्य करतां,
अहो! भक्ति भीना प्रभुचरणमां चित्त ढळतां।

(मंद अवलिप्त कपोल)

पांच पांच मंदिरन बीच जिन मंदिर जानो,
प्रथम जान अगनेइ सु नैऋत्य दूजे मानो।
वायव अरु ईशान चार विदिशा सु बखानी,
इनहीमें जिन भवन जजै सुर शिव सुखदानी।

ॐ ह्रीं जिनमंदिर संयुक्त समवसरण संस्थित जिनेन्द्राय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

(अडिल्ल)

चैत्य भूमि मंदिरन तनी तुम जानियो;
बनी बावडी वृक्षताल परमानियो;
नाना विध रचना करि शोभित भूमि जू;
देवी देव विद्याधर छाय झूमि जू।

सरस सरोवर सार वापिका पेखिये,
तिनमें बने सिवान सु नैनन देखिये।

नाना विधि के वृक्ष बद्ध श्रेणी कहै,
छ ऋतुके फल फूल बहुत से लहलहे।

मनो जिनेश्वर चरन पूजवे को चले,
ऐसी शोभा लिए सरस सुंदर रलै।

ॐ ह्रीं अनेक प्रकार शोभित चैत्यभूमि संयुक्त समवसरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घम्०

तिन वृक्षनके तले शीला सुखकार जू,
चंद्रकांत मणिसार तहां सुखकार जू।

ऐसी शिला विशाल बहुत शोभै तहाँ,
श्री मुनिराज समूह बिराजत है जहां।

परम उदासी दशा धरै सो जानिये,
देखि दशा वैराग जगै परमानिये।

तिन वचनामृत सुनै सु आतम काज जू,
तुरत जगै वैराग्य सुंदर सुविशाल जू।

ॐ ह्रीं चैत्यवृक्ष तले अनेक शीला पर बिराजते मुनि समूह संयुक्त समवसरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

(सुन्दरी)

बनि रहौ चित्राम सु सार जू, पंच मंदिरमें सुखकार जू,
भूमि मंदिर को वरनन करयो सार सुंदरता लखि कैं गह्यो।

ॐ ह्रीं चैत्यभूमि संयुक्त समवसरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

चैत्यभूमि चैत्यमंदिरस्थ जिनपूजा

(जोगीरासा)

भूमि मंदिरनकी सुखकारी पहली जानो भाई,
पूजों चारों दिशा अनुपम जिनमंदिर सुखदाई।
श्री जिनमंदिर सोहत सुंदर सुर नर मुनि मिलि पूजै,
आह्वानन करिये मन देके श्री जिन सन्मुख हुजै।

ॐ ह्रीं चैत्यभूमि चैत्यमंदिर स्थित जिनेन्द्राय ! अत्र अवतर अवतर संवोषट् तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं परिपुष्पांजलि क्षिपेत्।

अष्टक

(मंद अवलिप्त)

हिमवन परवत सार तहां द्रम पदम निहारो,
ताको उज्ज्वल नीर लाई जिन सन्मुख धारो।
भूमि मंदिरन तनी जहां जिन भवन विराजै,
पांच मंदिरन बीच जजूं सुर सिव पद काजे॥

ॐ ह्रीं चैत्य भूमि चारों दिस मंदिर स्थित जिन प्रतिमा अग्र जलं निर्वपामीति स्वाहा।

कुमकुम चंदन सार केसरि गारो,
श्री जिन सन्मुख जाई पुजि भवताप निवारो।
भूमि मंदिरन तनी०

ॐ ह्रीं चैत्य भूमि चारों दिस मंदिर स्थित जिन प्रतिमा अग्र चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

देवजीर सुखदाय सरस मुक्ता फल अक्षत,
अक्षय पदको पाई जिनसु पूजत अघ गच्छत।
भूमि मंदिरन तनी०

ॐ ह्रीं चैत्य भूमि चारों दिस मंदिर स्थित जिन प्रतिमा अग्र अक्षतं०

कमल केतुकी बेल चमेली बेला सारं,
ले गुलाब जिन जजूं तुरत भवि जातसु मारं।
भूमि मंदिरन तनी०

ॐ ह्रीं चैत्य भूमि चारों दिस मंदिर स्थित जिन प्रतिमा अग्र पुष्पं०

फैनी गूंझा सरस मोदक लाए घने,
जजूं जिनेश्वर चरन क्षुधादिक रोग नशेतें।
भूमि मंदिरन तनी०

ॐ ह्रीं चैत्य भूमि चारों दिस मंदिर स्थित जिन प्रतिमा अग्र नैवेद्यं०

मनिमय दीप अमोल कनक झारीमें धारो,
जगमग जगमग जोत मोह तम नाशि उजारो।
भूमि मंदिरन तनी जहां जिन भवन विराजै,
पांच मंदिरन बीच जजूं सुर सिव पद काजे॥

ॐ ह्रीं चैत्य भूमि चारों दिस मंदिर स्थित जिन प्रतिमा अग्र दीपं०

कृष्णागर करपूर कूट धरि धूप दशांगी,
करम पुंज जरिजाय खेय के धूप सुरंगी।
भूमि मंदिरन तनी०

ॐ ह्रीं चैत्य भूमि चारों दिस मंदिर स्थित जिन प्रतिमा अग्र धूपं०

श्री फल अरु बादाम लौंग सुंदर सुपारी,
जजूं जिनेश्वर चरन वरों शिव सुंदर नारी।
भूमि मंदिरन तनी०

ॐ ह्रीं चैत्य भूमि चारों दिस मंदिर स्थित जिन प्रतिमा अग्र फलं०

जल फल अर्घ बनाय परम उत्कृष्ट सु धारी,
अर्घ देहि सुंदर सु जिन पद जजि बलिहारी।
भूमि मंदिरन तनी०

ॐ ह्रीं चैत्य भूमि चारो दिस जिन मंदिर स्थित जिन प्रतिमा अग्र अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

(दोहा)

भूमि चैत्य मंदिरनकी पूजा भई विशाल,
जै जै जै सुर करत हैं लाल नवावत भाल।

(पद्धडी)

जय जय जय प्रथम सुभूमि जान, जय जिन मंदिर तामें बखान।
जय ताको वरनन बहु विशाल, सुनियो भवि मन वच दे त्रिकाल॥

जय नील रतनमय भूमिसार, जय ता पर जिन मंदिर अपार।
सैनी बंध पांच कहे विचार, जय बीच जिनेश्वर भवन धार॥

जय तुंग भूमि सोहै विशाल, ता पर जिनमंदिर बहु रसाल।
जय तीन गृह तोरन सहित द्वार, जय तिनके आगे चौक धार॥

जय लगे सिवान जु शोभकार, जय द्वार सुभग सोहे अपार।
जय पूजक जनको थित सुथान, बनि रहे जहाँ मनरंजमान॥

जय आस पास कोठा सुआन, जय रहौ चौकमें बीच आन।
ताके सु बीचमें पीठ तीन, जय शिखर बंध मंडप सु कीन॥

जय आभ्यंतर मंडप सुसार, जय तीन पीठ शोभै निहार।
जय तापर गंधकुटी अनूप, जय सिंहासन शोभे सुभूप॥

जय तापर कमल बिराजमान, जय सहस्र पत्र ताके प्रमान।
मणि जडित सु जोत लगी अपार, मनु पूरब दिश रवि उगो सार॥

जय ता परि श्री अरिहंत देव, सिर तीन छत्र शोभै सुमेल।
जय इन्द्र समूह चारों प्रकार, जय पूजे जिनवर हरष धार॥

जय नाना विध चित्राम सार, बनि रहै सु जगमग जोतिकार।
कहूं तेरह दीप तनो प्रमान, कहूं ढाई द्वीप तनो सुजान॥

जय चार सै ठावन भवन पेख, बनि रहै सुचित्र नयनन सु देख।
जय जय तुम देव दया निधान, कवि कोन करे ताको बखान॥

गनधर थुति करत हिये विचार, जयते तुम गुन पावत न पार।
जय तुच्छ बुद्धि मेरी निहार, बुधवन्त लोग लीजो विचार॥
उपदेश दियो सब सुख सुराय, जनलाल जीत भाषा बनाय॥

(दोहा)

श्री जिन भूम की कही आरती गाय।
जो नर वांचे भावसौ नित नित मंगल थाय॥

ॐ ह्रीं चतुर्दिशा चैत्यभूमि मन्दिरस्थ जिनबिम्बेभ्यः पूर्णार्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।

(अडिल्ल)

जो वांचे यह पाठ सरस मन लायके,
सुनै भव्य दे कान सु मन हरखायके।
धन धान्यादिक पुत्र पौत्र संपत्ति धरै,
नर सुर के सुख भोग बहुरि शिव तिय वरै ॥

॥ इति आशीर्वादः ॥

खातिका(द्वितीय) भूमि संयुक्त समवसरण स्थित जिनपूजा

(अनुष्टुप)

कंकणाकारनी छे त्यां, खातिका जलधि समी;
तरंगो, जलप्राणीथी, देव-नावोथी दीपती।

(उपजाति)

मणिना किनारा, अति स्वच्छ पाणी,
जल शुं द्रव्यां आ शशिकान्तमांथी!
प्रभु पूजवानी अति भावनाथी
शुं सुरगंगा उतरी ऊंचेथी?

ॐ ह्रीं खातिका द्वितीय भूमि संयुक्त समवसरण संस्थित जिनेन्द्राय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

(अडिल्ल)

पहली दूजी वेदी बीच सुजानिये,
बहै खातिका उज्ज्वल जल परमानिये।
तिन दोऊ, वेदीनके परधि विषै लहै,
शोभा बहुत विशाल सु दरवाजे कहै ॥

(सुंदरी)

लखि सु दरवाजे आगे कहूं, खातिका ऊपर पुल है सही,
सरस शोभा सो पुल देत है, रतन जडित सु उज्ज्वल स्वेत है।

ॐ ह्रीं लघु द्वार पुल सहित खातिका संयुक्त समवसरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

(अडिल्ल)

चैत्य सु मंदिर भूमि गमन ताते लहै,
भूमि खातिका विषै जाय आयो चहै;
तो वेदीनके द्वारनमें ह्वैके सही,
पुल के उपर जाय परम सुख सों सही।

(सोरठा)

वेदी कोट मंझार, द्वार बने लघु चहत है;
तिन द्वारनमें जाय, गंधकुटी लग देवनर।

ॐ ह्रीं चैत्य भूमि ते चल वेदी लघु द्वार पुल अनेक द्वारनके मार्ग होय गंधकुटीकी भूमि पर्यंत सुगम मार्ग संयुक्त समवसरण संस्थित जिनेन्द्राय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

(सुन्दरी)

उदधि क्षीर समान सु नीर जू, सरस खाई नीर गहीर जू।
लसत है सु नौकायें सार जू, बहुत छोटी बडी सु धार जू॥
तिन सु नौकाओं में सुर जानिये, सुरस विद्याधर परमानिये।
बजत साज सुजिन गुन गावते, करहिं नृत्य सु पुन्य उपावते॥
बैठ सुर सु नौकाओंमें जहां, सरस दौडादौड करें तहां।
दोय पार सुखाई की कही, चलत भव्य सुआनंद सो सही॥

ॐ ह्रीं अनेक नौकाये संयुक्त समवसरण संस्थित जिनेन्द्राय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

पुष्पवाटिका (तृतीय) भूमि संयुक्त समवसरण स्थित जिनपूजा

(अनुष्टुप)

भूमि भव्य लतावननी, म्हेकती सुरभिवती;
लताओ ज्यां हसे सर्वे, खीलेलां सुमनो थकी।

(हरिगीत)

त्यां मंद लहरे विविधरंगी पुष्परज बहु उडती,
जे ढांकती वन-गगनने संध्या समा रंगो थकी;
पर्वत क्रीडाना दिव्यने मंडप लताना भव्य छे,
शीतल शिला शशीकान्तनी ज्यां इन्द्र विश्रांति लहे।

ॐ ह्रीं तृतीय भूमि अनेक फूलवाडी संयुक्त समवसरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घम्०

(सुंदरी)

फूल जे उत्तम जगमें कहे, सुरभिता करि लीन जु लहलहे।
फैलियो जु सुगंध दशों दिशों, करत क्रीडा देख सु मनवसौ।
कहुं सुगेंदा सुंदर सार जू, फूलियो सु हजारा धार जू।
केवडो महके मन भावनो, फूलियो मुचकुंद सुहावनो।
जानि सीता फल तरु सोहने, जायफल बादाम सु मोहने।
और वृक्ष अनेक सु जानिये, बीचमें बंगला परमानिये।

ॐ ह्रीं तृतीय भूमि विषै अनेक रचना करि संयुक्त समवसरण संस्थित जिनेन्द्राय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

(भुजंग प्रयात)

सुनो रौसकी चार विदिसाजु माहि,
बने वापिका ताल सुंदर सुहाई।
लसै सार उज्ज्वल बंधी रतनमाला,
धरै कांति भारी सु सुंदर विशाला।

भरौ नीर उज्ज्वल मनो दूध धारा,
रले कंजके फूल सुंदर विशाला।
धरै जोग भारी अनागार धारी,
वरै मुक्ति नारी सो सोहै शिला पै।
चले भव्य आवे मुनिधर्म गावे,
भले भव्य ध्यावै सुनै धर्म तापै।

ॐ ह्रीं तृतीय भूमि विषैं वापी ताल वि संयुक्त समवसरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घम्०

(सुंदरी)

चन्द्रकांति शिला तहां पेखिये, मुनी सु ध्यान धरैं तहां देखिये,
देत भव्यनको उपदेश जू नमत आय सुदेव सुरेश जू।

ॐ ह्रीं समवसरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

सरस बेलनके मंडप बने वृक्ष सैनी बद्ध चले घने,
एक फुलवाडी वरनन कह्यो और तीनोंमें योंही लह्यो।
बहुत फुलवाडी ऐसी सही, आसपास सु विदिशा में कही,
धन्य पुन्य सु जिनवर देवको, लाल जान सु कीजे सेवको।

ॐ ह्रीं तृतीय भूमि अनेक रचना संयुक्त समवसरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घम्०

उपवन(चतुर्थ) भूमि संयुक्त समवसरण स्थित जिनपूजा

(शार्दूलविक्रीडित)

देवो रक्षक द्वारना, कर विषे आयुध धारी ऊभा,
मंगल द्रव्य सुरम्यने नवनिधि, सो तोरणो शोभता।
द्वारोनी द्वय बाजुए स्फटिकनी बे नाट्यशाला दीसे,
दूरे बे घट धूपना, धूम थकी ढांके अहो! आभने।

ॐ ह्रीं चौथी भूमि दरवाजे नाट्यशला संयुक्त समवसरण संस्थित जिनेन्द्राय अर्घम्०

(अनुष्टुप)

त्यां छे कोट अति ऊंचो, स्वर्णनो मणिए जड्यो;
स्वर्णना आभमां जाणे, शोभे नक्षत्रमंडलो।

ॐ ह्रीं दूजा कोट तीजी वेदी मध्य उपवन चौथी भूमि संयुक्त समवसरण संस्थित जिनेन्द्राय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

(अडिल्ल)

तहां दरवाजे तुंग सु सुंदर जानिये,
सरस नाटशाला ता आगे मानिये;
नाचे देवी सार हर्ष उर धारिये,
श्री जिनके गुन सार गावती भावसों।

ॐ ह्रीं चतुर्थ भूमि द्वार स्थित नाट्यशाला संयुक्त समवसरण संस्थित जिनेन्द्राय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

(हरिगीत)

ए नाट्यशाळा गाजती वीणा मृदंग सुतालथी,
गांधर्व-किन्नरी गान थी बहु देवदेवी सुनृत्यथी;
देवांगना जयगान करती, नाचती, आनंदती,
अभिनय करी जिन–विजयनो कुसुमांजलि जिन अर्पती
-कुसुमांजलि प्रभु अर्पती।

ॐ ह्रीं चतुर्थ भूमि नाट्यशाला संयुक्त समवसरण संस्थित जिनेन्द्राय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

(सुन्दरी)

जान दिश अगनेय सु हेत है, वन अशोक महा छबि देत है,
दिस सु नैरित देख विचारिये, सप्तपरन सुवन मन धारिये।

दिशा वायवमें चंपक कह्यौ, आम्रवन ईशान दिशा लह्यो;
वृक्ष बहुत अनेक सु देखिये, भूप वृक्ष सु चार विशेषिये।

गनि अशोक सु चंपक दूसरो, सप्तपरन सु आम्र लगै खरो,
सरस शोभा वनमें जानिये, लसत मंदिर बावडी आनिये।

ॐ ह्रीं चतुर्थभूमि स्थित अशोक, चंपक, आम्र सप्त परन मध्यस्थ भूपवृक्ष संयुक्त समवसरण संस्थित जिनेन्द्राय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

(शार्दूलविक्रीडित)

चंपक आम्र अशोक आदि वनमी भूमि मनोहारिणी,
वच्चे रम्य नदी तलाब, भवनो शी चित्रशाला रुडी !
कोकिला टहुके मधुर हलके, फलफूल वृक्षे लचे,
जाणे अर्घ लई ऊभा तरुवरो धरवा त्रिलोकेशने !

ॐ ह्रीं चतुर्थ भूमि चार वन अनेक रचना संयुक्त समवसरण संस्थित जिनेन्द्राय अर्घम्०

(तोटक)

बहु वृक्ष विशाल मनोहरणां,
रविकिरणनो पथ रोकी रह्यां;
तरुतेज झळोमळ छाइ रह्यां,
नहि दिवस रात जणाय तिहां।
तहीं चैत्य तरुवर दिव्य महा,
मूलमां प्रतिमाजी विराजी रह्यां;
सुर भक्तिनी धून मचावी रह्यां,
जयगान थकी वन गाजी रह्यां।

ॐ ह्रीं चतुर्थ भूमि में चैत्य तरुवर संयुक्त समवसरण संस्थित जिनेन्द्राय अर्घम्०

(सुंदरी)

तीन पीठ सु ऊपर राजई, चैत्यवृक्ष अशोक बिराजई;
मूलमें सु जड़े हीरा सही, हेममय सुन्दर शाखा कही।
पत्र पन्नाके रंग जानिये, लाल फूल फलै परमानिये,
फल महा रमणीक सुहावने, झुकि रहै सु सरस मन भावने।

ॐ ह्रीं चतुर्थभूमि स्थित अशोक वृक्ष अनेक रचना करि संयुक्त समवसरण संस्थित जिनेन्द्राय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

(भुजंगी)

लखौ सार विदिशा विषे वृक्ष सारं,
गनो चैत्यवृक्ष सु शोभा अपारं;
लसै चार वन नाम ऊपर सु जापै,
सोई चैत्य वृक्षं भले इन्द्र राखै।
लसैं सार शोभा सु देखे निहारी,
भजै पाप ताके लसै सुखकारी।

ॐ ह्रीं चतुर्थ भूमि विषे चार चैत्यवृक्ष संयुक्त समवसरण संस्थित जिनेन्द्राय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

*

उपवन(चतुर्थ) भूमि चैत्यवृक्ष जिनपूजा

(सुन्दरी)

वन चारों महा छबि देत है, सकल जीवतनौ सुख देत है।
चैत्य वृक्ष प्रति दिश सुहावनों, जिन सु पूज परम सुख पावनो।

ॐ ह्रीं अशोक वन, सप्तपर्ण वन, चम्पक वन, आम्र वन, चैत्य वृक्ष चार दिशा जिन प्रतिमा अत्र अवतर अवतर संवोषट् इति आह्वाननं। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट सन्निधिकरणं परि पुष्पांजलि क्षिपेत्।

(सुन्दरी)

परम पावन नीर सु लाइये, धार तीन सु दे हरखाइये,
वन सु चार जु सुंदर सोहनो, सुर सु पूजत तन मन मोहनो।

ॐ ह्रीं चार दिश चार वन चैत्य वृक्ष जिन प्रतिमाग्रे जलं निर्वपामीति स्वाहा।

मलय केशर गंध मिलाइये, भव सु दाह चढाय बुझाइये,
वन सु चार जु सुंदर सोहनो, सुर सु पूजत तन मन मोहनो।

ॐ ह्रीं चार दिश चार वन चैत्य वृक्ष जिन प्रतिमाग्रे चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

धवल शोभित तंदुल सार जू, करत पुंज अक्षय पद धार जू,
वन सु चार जु सुंदर सोहनो, सुर सु पूजत तन मन मोहनो।

ॐ ह्रीं चार दिश चार वन चैत्य वृक्ष जिन प्रतिमाग्रे अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

कमल केतकी चंपक पावने, काम नाशि सुजित गुन गावने,
वन सु चार जु सुंदर सोहनो, सुर सु पूजत तन मन मोहनो।

ॐ ह्रीं चार दिश चार वन चैत्य वृक्ष जिन प्रतिमाग्रे पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

चरु मनोहर सुन्दर देखिये, जिन चढाय परम सुख पेखिये,
वन सु चार जु सुंदर सोहनो, सुर सु पूजत तन मन मोहनो।

ॐ ह्रीं चार दिश चार वन चैत्य वृक्ष जिन प्रतिमाग्रे नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दीप मणिमय सुंदरता लहै, मोहनाश जु निज परको गहै,
वन सु चार जु सुंदर सोहनो, सुर सु पूजत तन मन मोहनो।

ॐ ह्रीं चार दिश चार वन चैत्य वृक्ष जिन प्रतिमाग्रे दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

सरस धूप दशांग सु खेइये, करम जार सुजिन पद सेइये,
वन सु चार जु सुंदर सोहनो, सुर सु पूजत तन मन मोहनो।

ॐ ह्रीं चार दिश चार वन चैत्य वृक्ष जिन प्रतिमाग्रे धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

फल सु नैनन को प्रियता धरै, फल चढाय सु शिवफल को करे,
वन सु चार जु सुंदर सोहनो, सुर सु पूजत तन मन मोहनो।

ॐ ह्रीं चार दिश चार वन चैत्य वृक्ष जिन प्रतिमाग्रे फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल सु आदि गनी फल सुंदर, लाल अर्घ चढ़ावत संत जू
वन सु चार जु सुंदर सोहनो, सुर सु पूजत तन मन मोहनो।

ॐ ह्रीं चार दिश चार वन चैत्यवृक्ष जिन प्रतिमाग्रे अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

(दोहा)

चौथी भूमि सुहावनी, वृक्ष अशोक सुजान,
शुभ शुभवरन मिलायके, लाभ भनै जयमाल।

(पद्धडी)

जय जय श्री वृक्ष अशोक जान, जय वरनन ताको हिये आनि,
जय वृक्ष अशोक दिपै जु सार, सब वृक्षन में भूपति निहार।
जय ताकी चारों दिशि बताय, जिनमंदिर चार कहे बनाय;
जय तीन पीठ ऊपर जु सार, शोभै श्री गंधकुटी विचार।
जय ता पर सिंहासन अनूप, जय तापर कमल बनो सरुप;
जय ता पर प्रतिमा जन सुदेव, जय राजत एक करुं सुसेव।
जय चारों दिश चारों सुजान, जय श्री अरहन्त विराजमान,
जय तीन छत्र सिर शोभकार, त्रिभुवन के ईश्वर कहत सार।
मोतीन की झालर बहु विशाल, जय छत्रन में लटके सुलाल,
जय प्रातिहार्य वसु दिपै सार, तिनको लखि सुर नाचै अपार।
जय बडी विभूति विलोक देव, ता थेई थेई थेई थेई करत सेव,
बाजत मृदंग वीनादि सार, जय सब समाज बाजत सुधार।
जय चारों दिश थिर ह्वै सुणार, जिनराज सुगुन जय जय उचार,
जय क्षीरोदधि उज्ज्वल सुनीर, जय लाय न्हवन जिन करत वीर।
जय फिर पूजत वसु द्रव्य लाय, जय नृत्य करत जिन गुन सु गाय,
जय जय प्रदक्षिणा देहिं तीन, जय चारों दिश थिर ह्वै नवीन।
जय जय श्री जिनवर गुन विशाल, तिनको मैं नमन करों त्रिकाल,
तिन आगे मानस्तंभ सार, जय शोभैं बहु आनंदकार।
जय जय मुख इन्द्र करै उचार, जय स्तुति जिनराज पढै विचार,
जय चक्रवर्ती बलदेव जान, जय नारायन प्रतिहर प्रमान।
जिनराजनमें आनंदधार प्रदक्षिण देय अनेक वार,
ज्यों मेघघटा को देख मोर, नाचें ऐसे सुर नर सु जोर।
जय हाथ जोड सन्मुख सु देख, जिनराज छबि देखे विशेष,
द्वै नयन न तृप्त भयौ सु इन्द्र, जय सहस नेत्र रचियौ सुरेन्द्र।

जय फिर फिर तिनको नमस्कार, कर गावत जिनगुण हरष धार,
वह समयो जिन देखो विशाल, धन जीवन है तिनको सुलाल।
जय या विधि पूजत हैं त्रिकाल, जय जय जिन चरनन नमत भाल,
जय एक अशोक सु वृक्ष सार, ताको वरनन भाखो विचार।
ऐसे ही चारों चैत्य वृक्ष, पूजत सुर नर लखि के प्रत्यक्ष,
श्री जिन महिमा वरनन अपार, कवि कौन कहैं ताको सुपार।
पर तुच्छ बुद्धि हमने सु पाई, जय जय जिन गुन कहे गाय,
उपदेश दियो सब सुख सुराय, भवि लालजीत भाषा बनाय।

(धत्ता)

चौथी उपवन भूमकी पूजा अरु जयमाल।
जो वांचे मन लायके पावे शिव पद हाल ॥

ॐ ह्रीं चतु:दिशा सबंधी चतुर्थ उपवन भूमि वृक्षस्थ जिनप्रतिमाभ्यः पूर्णार्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।

(अडिल्ल)

जो वांचे यह पाठ सरस मन लायके,
सुनै भव्य दे कान सु मन हरखायके;
धन धान्यादिक पुत्र पौत्र संपति धरै,
नर सुरके सुख भोग बहुरि शिव तिय वरै।

॥ इति आशीर्वादः ॥

ध्वज (पंचम) भूमि संयुक्त समवसरण स्थित जिनपूजा

(अनुष्टुप)

स्वर्णनी मेखला जेवी, शोभे त्यां वनवेदिका;
जडेली रत्ननी छे ने, पछी छे ध्वजभूमिका।

ॐ ह्रीं तीजी वेदी और तीजे कोट मध्य पांचवीं भूमि महा सुन्दर ध्वज समुह सहित समवसरण संस्थित जिनेन्द्राय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

(अडिल्ल)

तहां भूमि पांचवीं महा सुन्दर कही,
धुजा समूह सु लहकै सुंदरता लही;
वेदी कोट विशाल महा शोभा सचौ,
नानाविधि चित्राम चित्र खांचिके खंचौ।

कहीं तीर्थंकर देव भवान्तर शुभ लही,
कहीं जिनमाता सुपने देखे सार जू;
कहीं तीर्थंकर पंच कल्याणक रुपजी,
तिनके चित्र निहार परम, सु अनूपजी;
तीर्थंकरको न्हवन भयो गिरि पर तहां,
नागदत्त हाथी चढ़ि इन्द्र गयो जहां।

चक्रवर्ती की विभौ कहूं दृग देखिये,
नारायन बलभद्र सुनयन निहारिये;
भोगभूमि त्रय उत्तम मध्यम जानिये,
और जघन प्रमान सुहियमें आनिये।

ॐ ह्रीं पंचम भूमि विषै कोट वेदी चित्राम संयुक्त समवसरण संस्थित जिनेन्द्राय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

(सुन्दरी)

लसत भूमिधुजाकी जानिये, धरहिं चिन्ह धुजा परमानिये।
सिंह हाथी वृषभ सु मोर जू, गगन माला गरुड सुजोरजु ॥
हंस चक्र सुकमल निहारिये, चिह्न ये दश भेद विचारिये।
लहकती सुधुजा सुन्दर जहां, वरन को कवि भाखत हैं तहां ॥

ॐ ह्रीं पंचम भूमि धुजा समूह सिंहादि दश भेद चिन्ह संयुक्त समवसरण संस्थित जिनेन्द्राय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

लसत चिन्ह सु एक धुजा कही, एक सौ अरु आठ गनो सही।
चिन्ह दशकी धुजा गनीजिये, सहस एक असी लखि लीजिए ॥

ॐ ह्रीं पंचम भूमि स्थित संबंधी धुजा एक सौ आठ दश चिन्ह संबंधी एक सहस्र अस्सी एक दिशा महा धुजा संयुक्त समवसरण संस्थित जिनेन्द्राय अर्घम्०

एक दिश की भाखी गायके, चार जोडो मन लायके।
चार सहस सुतीनसे जानिये, बीस ऊपर गन मन आनिये ॥

ॐ ह्रीं पंचम भूमि स्थित चार दिशा की महाधुजा चार हजार तीनसौ बीस संयुक्त समवसरण संस्थित जिनेन्द्राय अर्घम्०

(दोहा)

महाधुजा तो एक है, ताके संग निहार।
कही एकसो आठ जू, छोटी धुजा विचार ॥
चारों दिशि छोटी धुजा, चार लाख मन लाय।
छयासठि सहस सु पांचसै साठ अधिक सुखदाय ॥

ॐ ह्रीं पंचम भूमि स्थित चारों दिशा संबंधी महा धुजा ४३२० के संग छोटी धुजा चार लाख छयासठि हजार पांचसै साठ संयुक्त समवसरण संस्थित जिनेन्द्राय अर्घम्

चार सहस अरु तीन सै बीस अधिक सब जान।
महा धुजा चारों दिशा भाखी श्री भगवान ॥

ॐ ह्रीं पंचम भूमि स्थित चार सहस्र तीन सै बीस महा धुजा चार दिशि संबंधी समवसरण संस्थित जिनेन्द्राय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

(सुन्दरी)

धुजा गनियो सब मन लायके, चार लाखे कही जिन गायके,
सहस सत्तर आठसै जानिये, गनि सु अस्सी ऊपर मानिये।

ॐ ह्रीं ध्वज भूमि स्थित चारों दिशा चार लाख सत्तर हजार आठ सौ अस्सी धुजा समूह संयुक्त समवसरण संस्थित जिनेन्द्राय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

(वसंततिलका)

माला-मयूर-कमलादि सुचिह्न साथे,
सुवर्णस्तंभ पर शी ध्वजपंकति राजे!
फरकावती विजय ए जगनाथनो के
बोलावती त्रिजगने जिन पूजवाने?

ॐ ह्रीं ध्वज भूमि संयुक्त समवसरण संस्थित जिनेन्द्राय अर्घम्०

(भुजंगप्रयात)

बनी भूमि सुंदर ध्वजाकी सुजानो, तहां ताल वापी पर्वत बखानो।
बनी सार सुंदर लसै सुखकारी, करै देव क्रीडा धरे कांति भारी।
तहां वृक्ष जानो फलै फूल मानो, झुकी डार आनो भली शोभ धारै।
मनो कल्पवृक्षं सु सोहै प्रत्यक्षं लखै सुख अक्षं क्षुधा दोष टारै।
तहां मुनि विहारी धरैं जोग भारी, सुआतम विचारी भली भांति भाई।
बुरे कर्म नाशी स्वपर ज्ञान भासी, सुआतम विलासी जगी जोत पाई।
चले भव्य आवे भली भांति ध्यावै विनय शीश नावै सुनै धर्म्म वानी।
कोई ध्यान लालं पूजै त्रिकालं सुदीसै विशालं भली बुद्धि टानी।

(दोहा)

पंचम भूमि सुहावनी, वर्णन कियो सुधार।
धन्य सुनर भविलालजी, देखत नयन निहार॥

ॐ ह्रीं पंचम ध्वजभूमि अनेक रचना संयुक्त समवसरण संस्थित जिनेन्द्राय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

कल्पवृक्ष (षष्ठम) भूमि संयुक्त समवसरण स्थित जिनपूजा

(अनुष्टुप)

कांतिमान, अति ऊंचो, कोट चांदी तणो अहो !
द्वारनी दिव्य लक्ष्मीथी, नाट्यशालाथी दीपतो।

ॐ ह्रीं तीजो कोट चौथी वेदी ताके बीच कल्पवृक्ष भूमि संयुक्त समवसरण संस्थित जिनेन्द्राय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

(अडिल्ल)

रही बीचमें भूमि तास वरनन कहौ,
चारों विदिशा मांहि सुवन सुंदर लहौ;
कल्पवृक्षके जान समूह चले गये,
आसपास चौतरफा सुन्दर सो भये।

ॐ ह्रीं षष्ठी भूमि चौतरफा कल्पवृक्ष संयुक्त समवसरण संस्थित जिनेन्द्राय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

(तोटक)

शी कल्पतरुभूमि रम्य अहा!
नदी, वाव, सभागृह स्वर्गसमा;
दशविध अहो! तरुकल्प तले,
निज स्वर्ग भूली बहु देव रमे।

ॐ ह्रीं कल्पवृक्ष भूमि संयुक्त समवसरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

(अडिल्ल)

कल्पवृक्ष काहे ते नाम सुपाइए,
जो मनवांछित वस्तु देय हरषाइये,
कहे सुदश प्रकार भेद तिनको सुनो,
श्री जिन पुन्य महान विभौ ऐसी मनो।

ॐ ह्री मनवांछित दातार कल्पवृक्ष संयुक्त समवसरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घम्०

(सुंदरी)

सरस भाजन एक सुदेत है, गृह बने दूजो शुभ हेत है,
सरस आभूषण तीजे दये, वस्त्र सुंदर चौथे पर लये।
पांचमौ भोजन सुखकारजू, नीरपान छठो उर धारजू,
जोत जगमग जान सु सातमो, सरस माला लटके आठमो।
देत बाजे नवमो जानिये, लसत दीपक दशमौं मानिये;
वस्तु मनवांछित शुभ सारजू, देत ते तरु आनंद धारजू ।।७।।

ॐ ह्रीं कल्पवृक्ष भूमि विषैं दश प्रकारके कल्पवृक्ष संयुक्त समवसरण संस्थित जिनेन्द्राय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

लसत वन सुंदर सुखकारजू, कल्पवृक्षनको दिशचारजू,
बनि रहे मंदिर तहां देखिये, वापिका अरु ताल सु पेखिये ।।
रहिय शाखा झूमि सु सारजू, चंद्रकान्त शिलातल धारजू,
धरत ध्यान सुमुनिगन आयके, कर्मपुंज खिपावत जायके ।।

ॐ ह्रीं कल्पवृक्ष भूमि अनेक रचना करि संयुक्त समवसरण संस्थित जिनेन्द्राय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

(भूजंगप्रयात)

धरै ध्यान भारी सु आतम विचारी, महा पुन्यकारी लसै संजमीजू,
हनी मोह फांसी सदा सुखरासी, स्वपर भेद भायो कषाये दमीजू ।।
लखे नर सुदेवा, जजै चरनसेवा, सुनै धर्म्म मेवा, भले भेद गाई,
चले भव्य आवें, तीन्हें शीश न्यावें, भले सुख पावें लहै ज्ञान भाई।
कहूं सार पर्वत बनै सुखकारी, सु तिनकी शिखा पर शिला शुद्ध धारी,
तहां मुनि विराजै धरै ध्यान गाजे, सबै पाप भाजे सु एकाविहारी ।।

ॐ ह्रीं कल्पवृक्ष भूमि विषै मुनि समूह बिराजमान संयुक्त समवसरण संस्थित जिनेन्द्राय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

बने वन सु चारों दिशा चार धारो सुबीचे निहारो अरे भव्य भाई,
बने सिद्धार्थ वृक्ष लखै पाप गच्छं सु देखे प्रत्यक्ष रहे सुर सु छाई ।।

ॐ ह्रीं कल्पवृक्ष भूमि विषै चार सिद्धार्थवृक्ष संयुक्त समवसरण संस्थित जिनेन्द्राय अर्घम्०

(त्रोटक)

मालांग तरु बहु माल धरे,
दीपांग तरु पर दीप बळे;
फूल माल अने दीपमाल वडे,
वन पूजी रह्युं शुं जिनेश्वरने?
सिद्धार्थतरु अति दिव्य दीसे,
मनवांछित जे फलदायक छे;
त्रण छत्र रहे तरुराज परे,
फरके ध्वज, सुंदर घंट बजे।
ए वृक्ष तले सिद्धबिंब रहे,
सुरलोक जहां प्रभुभक्ति करे;
कोई स्तोत्र भणे प्रभुगुण स्मरे,
कोई नम्रपणे भगवान नमे।
कोई गान करे, कोई नृत्य करे,
कोई शुद्ध जले अभिषेक करे;
कोई दीप वडे, कोई धूप वडे,
सुर पूजी रह्यां परमातमने।

ॐ ह्रीं कल्पवृक्ष भूमि संबंधित सिद्धार्थतरु संयुक्त समवसरण संस्थित जिनेन्द्राय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

(सुंदरी)

रतन मणिमय पीठ सुहावनौ, जगमगाति सुजोत सुहावने
सिद्धार्थतरु, सुमेर सुहावनौ, पीठ तीन सु ऊपर गावनौ।
जड विषै सुंदर हीरा जडे सरस सूधे चारों दिशि खडे,
मणिमई शाखा परमानिये, पत्र पन्नाके रंग जानिये।
लाल फूलनके गुच्छा कहे, फल मनोहर मिष्ट सु लहलहे
लसत शोभा करि सो जानिये, सिद्धार्थतरु मनोहर मानिये।

ॐ ह्रीं कल्पवृक्ष भूमि संबंधित सिद्धार्थतरु अनेक रचना संयुक्त समवसरण संस्थित जिनेन्द्राय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

वृक्षके चारों दिशि ठानिये, चार जिनमंदिर उर आनिये,
लसत मानस्तंभ सु देखिये, धन्य धन्य जिनेश्वर पूजिये।

ॐ ह्रीं कल्पवृक्ष भूमि संबंधित चार दिश जिनमंदिर, मानस्तंभ संयुक्त समवसरण संस्थित जिनेन्द्राय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

(मंद अवलिप्त कपोल)

मेर वृक्ष अगनेय दिशा माहीं परमानो,
नैरितमें मंदार सरस शोभा करि जानो।
वायवमें सन्तानमानके सन्मुख हुजे,
पारजात ईशान दिशा भविलाल सु पूजे॥

ॐ ह्रीं कल्पवृक्ष भूमि चारों दिश सिद्धार्थतरु संयुक्त समवसरण संस्थित जिनेन्द्राय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

कल्पवृक्ष भूमि भूप वृक्षस्थ जिनपूजा

(दोहा)

कल्पवृक्षकी भूमि जहां, समवसरणमें जानि।
चार वृक्ष जहां भूप है, पूजो श्री भगवान॥

ॐ ह्रीं कल्पवृक्ष भूमि विषैं चारों दिश चार वन बीच चार भूप वृक्ष; प्रति भूप वृक्ष चार दिश चार जिनमंदिर अत्र अवतर अवतर संवौषट् इति आहवानन्। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं।

(जोगीरासा)

पद्मद्रहको नीर सु लेकरि, मनिमय झारी धारौ,
जन्म जरादिक नाशन कारण, श्री जिनपद सन्मुख धार करो।
समवसरणमें कल्पवृक्षकी भूमि रतनमय सोहे,
चार वृक्ष चार दिशा, जिन पूजत सुर शिव हो है।

ॐ ह्रीं प्रति भूप वृक्ष चारों दिश जिन प्रतिमाग्रे जलं निर्वपामीति स्वाहा।

मलयागिरि करपूर सुलावो, केसर सरस सुवासी,
श्री जिनवरके चरन चढावौ, भव आताप विनाशी।
समवसरणमें कल्पवृक्षकी भूमि रतनमय सोहे,
चार वृक्ष चार दिशा, जिन पूजत सुर शिव हो है।

ॐ ह्रीं प्रति भूप वृक्ष चारों दिश जिन प्रतिमाग्रे चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

देवजीर सुखदास अटूटे अक्षत उज्ज्वल लीजे,
अक्षय पद उपजावन कारन, जिनढिंग पुंज सु दीजे।
समवसरणमें०

ॐ ह्रीं प्रति भूप वृक्ष चारों दिश जिन प्रतिमाग्रे अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

कमल केतुकी कुन्द चमेली, सरस गुलाब सुहाया,
जिनपद पूजि समरस रक्षय, निज आतम पद पाया।
समवसरणमें०

ॐ ह्रीं प्रति भूप वृक्ष चारों दिश जिन प्रतिमाग्रे पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

घेवर बावर मोदक खाजे, गुंझा फेनी ताजे,
श्री जिन चरन चढाई मनोहर, रोग क्षुधादिक भाजे।
समवसरणमें०

ॐ ह्रीं प्रति भूप वृक्ष चारों दिश जिन प्रतिमाग्रे नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दीप रतनमय कनक थालमें, जगमग जोत उजारी,
मोह अंधके नाशन कारन, जिन चरनन तलधारी।
समवसरणमें०

ॐ ह्रीं प्रति भूप वृक्ष चारों दिश जिन प्रतिमाग्रे दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

कृष्णागर करपूर सु लेकर, धूप दशांग सु लावो,
खेय अगनिमें, जिनपद पूजो, कर्म जारि शिव पावो।
समवसरणमें०

ॐ ह्रीं प्रति भूप वृक्ष चारों दिश जिन प्रतिमाग्रे धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

लौंग सुपारी दाख छुहारे पिस्ता धोय धरीजे,
श्री जिन चरन जजै भवि प्राणी भवसागर तैं सीझै।
समवसरणमें कल्पवृक्षकी भूमि रतनमय सोहे,
चार वृक्ष चार दिशा, जिन पूजत सुर शिव हो है।

ॐ ह्रीं प्रति भूप वृक्ष चारों दिश जिन प्रतिमाग्रे फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

जल चंदन चामर शुभ लेकर, फूल सुलाल निहारो,
नेवज दीप धूप फल उत्तम अर्घ पूजि अघ टारौ।
समवसरणमें०

ॐ ह्रीं प्रति भूप वृक्ष चारों दिश जिन प्रतिमाग्रे अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाला

छठवी भूमि सुहावनी देखत नयन अघात।
तीन योग दे के सुनो, लाल कुंवर बलि जात॥

(पद्धडी)

जय मेर वृक्ष भूपति बखान, सब वृक्षनमें नृप सम सुजान,
जय सुर नर लखि नाचत प्रवीन, जय तास वरन भाखो नवीन।
जय शोभा वृक्ष तनी अपार, ऊपर अर्घनमें कही सार,
जय वृक्ष सु चारों दिशि प्रमान, जिन भवन सु चार कहे बखान।
जय गंधकुटी शोभे अनूप, जय जगमगात रवि जोत रूप,
जय सिंघासन शोभै सुतीन, जय ता पर कमल रचौ नवीन।
जय ता पर प्रतिमा एक जान, जय सिद्ध स्वरूप तनी बखान,
जय तीन छत्र शोभै महान, जय चमर झिलै आनंद खान।
जय जिन दुति उज्ज्वल जगमगाति, मानो दुग्धोदधि लहर भान्ति,
जय सुर नर पूजा करत गाय, जय वसुविध द्रव्य सुले चढाई।
जय फिर फिर प्रभुको दरस सार, नयन भरि निरखत हरष धार,
जय जिन थुति मुख तें फिर उचार, जय जय जिन जग ते करहु पार।

जय सुर वरषावत सुमन सार, गंघोदक वर्षा हिये धार,
जय रतन धार वरषै विशाल, जय जगमग नभ दीसै सुलाल।

जय दुंदुभि बाजे बजैं धीर, तिनकी धुनि सुनि सुर नचैं वीर,
जय ता आगे जानो सुसार, श्री मानस्तंभ हिये विचार।

मानी को मद देखत विलाय, जय जय श्री मानस्तंभ गाय,
इक भूपवृक्ष जिन भवन चार, जय या विधि भाषी हरष धार।

जय ऐसे चारों दिशि बखान, जय सोलह जिन मन्दिर प्रमान,
जै सोलह जिन मंदिर विशाल सुर नर मिल पूजत है त्रिकाल।

(दोहा)

श्री जिनमहिमा अगम है, को कवि पावे पार।
तुच्छबुद्धि कवि लालजी, भाषा रची विचार॥

ॐ ह्रीं षष्ठम भूमि विषै चतुर्दिशि भूपवृक्षस्थ जिनेन्द्राय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(अडिल्ल)

जो वांचे यह पाठ सरस मन लायके,
सुने भव्य दे कान सुमन हरखायके;
धन धान्यादिक पुत्र पौत्र संपति बढै,
नर सुर के भोग बहुरि शिवतिय वरै।

॥ इत्याशीर्वाद ॥

भवन (सप्तम) भूमि संयुक्त समवसरण स्थित जिनपूजा

(अनुष्टुप)

गोपुरादिथी शोभंती स्वर्ण–वनवेदी पछी;
अहो ! प्रासाद सुंदरने रत्नस्तूप तणी भूमि ।

ॐ ह्रीं सातमी भूमि अभ्यंतर चौथी वेदी संयुक्त समवसरण संस्थित जिनेन्द्राय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा ।

(सुंदरी)

जानि वेदीमें चित्रामजू, लसत सुन्दर है अभिरामजू,
कहीं श्री मुनि संग बिराजते देखिये चित्राम सुराजते ।
कहू सुमुनिवर ध्यान धरैं रहैं, कही सुवृष उपदेश भले कहै,
गिर विषे ठाडे धरि जोगजू, चित्र ऐसे विरक्त भोग जू ।
चलत भूम सुनयन निहारके, देखियत मुनिराज विचारके,
देत श्रावक दान सुजानके, रतन बरसत तिन घर आनके ।

ॐ ह्रीं चौथी वेदी चित्राम संयुक्त समवसरण संस्थित जिनेन्द्राय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा ।

(अडिल्ल)

वेदी भाग सु चार हिये में आनिये,
स्वेत वरन है कोट सु चौथो मानिये,
हीरा ही को बनो भाग सो चार जू,
रचौ धनद निज हाथ महा सुख कारजू ।
कंचनमय थंभा तिनके परमानिये,
हीरन कर सो जडित हियेमें आनिये ।

ॐ ह्रीं चौथी वेदी और चौथा कोट बीच सप्तमभूमि संयुक्त समवसरण संस्थित जिनेन्द्राय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा ।

(उपजाति)

सुवर्ण स्तंभो मणिनी दिवालो,
चंद्री समा उज्ज्वल चारु हर्म्यो,
देवो रमे त्यां, करता सुवार्ता,
नाचे, बजावे, प्रभुगान गाता ।

ॐ ह्रीं सप्तमी भवनभूमि संयुक्त समवसरण संस्थित जिनेन्द्राय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा ।

(सुंदरी)

तिन सुमंदिर बीच निहारिये, चौक कुरसीदार विचारिये,
रतन जडित लगे सोपानजू, चढि सुमंदिर ऊपर मानजू ।
सहस एक सुथंभा जानिये, बनि रहौ मंडप सुख कारजू,
रतन माल सुलहकती कही, पुन्य जान जिनवर को सही ।

ॐ ह्रीं सप्तमी भूमि मंडप संयुक्त समवसरण संस्थित जिनेन्द्राय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा ।

(अडिल्ल)

ताहीमें श्रुतकेवली बैठे देखिये,
परम धर्म दातार सुनयनन पेखिये;
तहां जिनवानी सार शास्त्र सु बखानते,
सुने भव्य जे जीव लहै सो ज्ञानते ।

ॐ ह्री सप्तमी भूमि में बिराजमान श्रुतकेवली पूजनार्थे अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा ।

(हरिगीत)

छे स्तूप बहु ऊंचा मनोहर, पद्मराग मणि तणा,
अरिहंत ने सिद्धोतणां, बहु बिंबथी शोभे घणां,
त्यां देव-मानव भावभीना चित्तथी पूजन करे,
अभिषेक, नमन, प्रदक्षिणा करी हर्ष बहु हृदये धरे ।

ॐ ह्रीं सप्तमी स्तूप भूमि संयुक्त समवसरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा ।

(दोहा)

जो कुछ चूक विलोकके सोधै जो गुनवान,
छिमा भाव मो पै करो, कवि लघुताई जान।

ॐ ह्रीं सप्तमी भूमि अनेक रचना करी संयुक्त समवसरण संस्थित जिनेन्द्राय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

* * *

सप्तम भूमि स्तूप जिनपूजा

(दोहा)

समवसरण जिनराजके चारों दिशा बताय।
शोभित तूप सुहावने, पूजो प्रति दिश नव हरखाय॥

ॐ ह्रीं सप्तम भूमि स्थित चार दिश छत्तीसस्तूप जिन प्रतिमाग्रे अत्र अवतर अवतर संवौषट्। ॐ ह्रीं सप्तम भूमि स्थित चार दिश छत्तीसस्तूप जिन प्रतिमाग्रे अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं। ॐ ह्रीं सप्तम भूमि स्थित चार दिश छत्तीसस्तूप जिन प्रतिमाग्रे अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं परिपुष्पांजलि क्षिपेत्।

(सोरठा)

नीर समुद्रको सार, रतन कटोरीमें धरों।
तूप सु नव सुखकार, चारों दिश पूजा करो॥

ॐ ह्रीं सप्तम भूमि स्थित चार दिश छत्तीस स्तूप जिन प्रतिमाग्रे जलं निर्वपामीति स्वाहा।

चंदन केशर गार, भव आताप विथा हरो।
तूप सु नव सुखकार, चारों दिश पूजा करो॥

ॐ ह्रीं सप्तम भूमि स्थित चार दिश छत्तीस स्तूप जिन प्रतिमाग्रे चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

मुक्ताफल उनहार, अक्षत जिन आगे धरों।
तूप सु नव सुखकार, चारों दिश पूजा करो॥

ॐ ह्रीं सप्तम भूमि स्थित चार दिश छत्तीस स्तूप जिन प्रतिमाग्रे अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

महके फूल अपार, काम देख आपुहिं डरो।
तूप सु नव सुखकार चारों दिश पूजा करो॥

ॐ ह्रीं सप्तम भूमि स्थित चार दिश छत्तीस स्तूप जिन प्रतिमाग्रे पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

फैनी गोंझा सार, उत्तम षट्रस संचरौ।
तूप सु नव सुखकार, चारों दिश पूजा करो॥

ॐ ह्रीं सप्तम भूमि स्थित चार दिश छत्तीस स्तूप जिन प्रतिमाग्रे नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जगमग दीप निहार, मोह नाशि जग तैं तरौ।
तूप सु नव सुखकार, चारों दिश पूजा करो॥

ॐ ह्रीं सप्तम भूमि स्थित चार दिश छत्तीस स्तूप जिन प्रतिमाग्र दीपं०

धूप अगनि में डार दुष्ट कर्म आपु हि जरौ।
तूप सु नव सुखकार, चारों दिश पूजा करो॥

ॐ ह्रीं सप्तम भूमि स्थित चार दिश छत्तीस स्तूप जिन प्रतिमाग्रे धूपं०

फल उत्कृष्ट सम्हार, शिव सुन्दर आपुहि वरो।
तूप सु नव सुखकार, चारों दिश पूजा करो॥

ॐ ह्रीं सप्तम भूमि स्थित चार दिश छत्तीस स्तूप जिन प्रतिमाग्र फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल फल अर्घ बनाई, लाल सु जिन पायन परौ।
तूप सु नव सुखकार, चारों दिश पूजा करो॥

ॐ ह्रीं सप्तम भूमि स्थित चार दिश छत्तीस स्तूप जिन प्रतिमाग्रे अर्घं निर्व० स्वाहा।

जयमाला

(दोहा)

गली सातई के विषै चारों दिशा विशाल,
तूप सुछत्तीस जानिये सुनो भवि जयमाल।

(पद्धडी)

जय जय छतीसों तूप जान, जय चारों दिश के कहे मान।
जय तिनको नमन करौ त्रिकाल, जय वरनन भाखो बहु विशाल॥

जय भूमि सातई बीच जान, जय नव नव चारों दिश बखान।
जय पूरव दिश नव जान तूप, जय दरवाजै शोभे अनूप॥

तिनमें इक तूप तनौ सुवर्ण, मैं भाखत हो शिव सुख कर्ण।
जय तीन पीठ जानो प्रमान, मनिमई रतन सो जडे जान॥

तीन पर श्री तूप लसै विशाल, जय लटकत मोती रतन माल।
जय जिन तन तैं ऊचौ निहार, जय बारह गुणो हिये विचार॥

जय ऊंचौ शिखर लसै सुजान, ता पर कलशा सुंदर प्रमान।
शुभ दंड धरे सु धुजा विचार, लहकें नभ में आनंदकार॥

जय तिनमें तोरन सौ प्रमान, मणिमय रतन सों जड़े जानि।
जय मोतिन की झालर रिसाल, जय जगमग जगमग जोति लाल॥

जय तीन तोरन बिच तीन सार, जय सिंघासन शोभै विचार।
जय तिन दुत देख छिपो जु सूर, निकसी दुति दश दिश रही पूर॥

जय तिनपर राजत जिन सुदेव, जय जय श्री अरिहंत सुसिद्ध सेव।
इनकी प्रतिमा जानो विचार, भवि जीवनको आनंदकार॥

जय तीन जु शीश पर छत्र तीन, त्रिभुवन के पति भाखत प्रवीन।
जय वसुविधि मंगल द्रव्य आन, जय राजत मंगल की जु खान॥

जय वसु विध द्रव्य जु सार लाय, जय पूजत श्री जिनके सुपाय।
जय जय जिन गुन जयमाल गाय, जय स्तुति फिर भाखत बनाय॥

जय जिन गुन गावत हरष धार, बहु पुन्य बढावत सुर विचार।
जय धन्य जन्म तिनको बखान, जय जिन दर्शन देखत सुजान॥
जय सफल जन्म तिनको प्रमान, जिन पूज सुपावन तन सुजान।
जय एक तूप वरनन निहार, जानों इक दिश में नव विचार॥

चारों दिश छतीस कहे गाय, सुर नर पूजत आनंद पाय।
छतीस तूप वरनन विचार, जय शीश नाय भाखत सुलाल॥

(दोहा)

गली सातई चार दिश, तूप सु छत्तीस जान।
शुभ शुभ अक्षर लाइके, पूजा करी बखान॥

ॐ ह्रीं चतुर्दिशा संबंधी षट् त्रिशत स्तूपस्थ जिनेन्द्रेभ्यः पूर्णार्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।

(अडिल्ल)

जो वांचे यह पाठ सरस मन लायके,
सुनै भव्य दे कान सु मन हरखायके;
धन धान्यादिक पुत्र पौत्र संपत्ति धरै,
नर सुरके सुख भोग बहुरि शिव तिय वरै।

इति आशीर्वाद

❁

श्रीमंडप (अष्टम) भूमि संयुक्त समवसरण स्थित जिनपूजा

(अडिल्ल)

चौथा नाम सुकोट वज्र जानिये,
हीरा की सी कान्त स्वेत मन आनिये;
ऊँचो जिन तनसे चौगुनो देखिये,
एक भाग मोटाई परम विशेषिये।

ॐ ह्रीं चौथा कोट संयुक्त समवसरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

(अनुष्टुप)

नभोस्पर्शी, मनोहारी, अहो ! कोट स्फटिकनो,
पद्मराग तणां द्वारो, मंगल द्रव्योथी दीपतो;
पछी रत्नदिवालो ने रत्नस्तंभ परे अहो!
मंडप रत्नतणो ऊंचो एक योजन व्यासनो।

ॐ ह्रीं मंडप भूमि संयुक्त समवसरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

(अडिल्ल)

वज्र कोट वेदी पांचइ सु जानिये,
भूमि आठई गली सुनयन आनिये;
तिनमें द्वै द्वै गली तनी वेदी कही,
दोय दोय बीच भीत फटकमय है सही।
चार भीत बीच अंतर तीन जु पेखिये,
चार दिसाकी सोलह भीत विचारीये।

ॐ ह्रीं अष्टम भूमि बारह कोठा संयुक्त समवसरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

(वसंततिलका)

श्री मंडपे गणधरो मुनि, अर्जिका ने,
तिर्यंच, सुरगण, मानवनी सभा छे,
अहि-मोर ने मृग–हरि निज वेर भूले,
सौ शांत लीन थई अमृतधार झीले।

ॐ ह्रीं अष्टम भूमि बारह सभा संयुक्त समवसरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

(सुंदरी)

गनि दिशा अगनेय विषै सही, लसत कोठा तीन प्रभु कही,
मुनि सुरी सुकल्पवासिनि गनो, तिय मनुष्यन की तीजी भनो।

ॐ ह्रीं अगनेय कोठा तीन विषै मुनि, कल्पवासिनी, मनुष्यनी संयुक्त समवसरण संस्थित जिनेन्द्राय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

दिश सुनैरित कोठा तीन जू, सरस ज्योतिषिनी भर लीनजू,
सुनहि जिनवच विंतरनी तिया, भवनवासिनी तीजें में लिया।

ॐ ह्रीं श्रीमंडपभूमि अन्तर्गत नैऋत्य दिशा विषै कोठा तीन ज्योतिषीनी विंतरनी भवनवासिनी संयुक्त समवसरण संस्थित जिनेन्द्राय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

तीन कोठा वायवमें कहे, भवनवासी विंतर लहलहे,
ज्योतिषी सुर बैठे सार जू, सुनत जिनवाणी हित धारजू।

ॐ ह्रीं श्रीमंडपभूमि अन्तर्गत वायव्य दिशा विषै कोठा तीन भवनवासी, ज्योतिषी व्यंतर सुर वानी सुनत संयुक्त समवसरण संस्थित जिनेन्द्राय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

परम दिशा ईशान विचारिये, लसत कोठा तीन निहारिये,
कल्पवासी सुर नर देखिये, बारमें तिर्यंच सु पेखिये।

ॐ ह्रीं श्रीमंडपभूमि अन्तर्गत ईशान दिशा कोठा तीन कल्पवासी देव नर तिर्यंच संयुक्त समवसरण संस्थित जिनेन्द्राय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

(वसंततिलका)

वैडूर्यरत्न तणी सुंदर पीठ शोभे,
ज्यां सोल सीडी शुभ मंगल द्रव्य राजे,
छे धर्मचक्र अतिशोभित यक्ष माथे,
आरा सहस्र थकी बाल दिनेश लाजे।

ॐ ह्रीं श्रीमंडपभूमि अन्तर्गत प्रथम पीठ चारों दिश धर्मचक्र वसु मंगल द्रव्य संयुक्त समवसरण संस्थित जिनेन्द्राय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

(सुन्दरी)

इन्द्र आदिकजे गुनवान जू, करत पूजा श्री भगवान जू,
उतरिके जु सिवानन ते जहां, निज सु कोठा बैठत है तहां।
पीठ दूजी पर चढि ना सके, जानि यह जिनवानी यो कहै,
पुन्य श्री जिनदेव विशाल जू, करत पूजा इन्द्र त्रिकाल जू।

ॐ ह्रीं श्रीमंडपभूमि अन्तर्गत प्रथम पीठ पर इन्द्र पूजा करे इह अतिशय संयुक्त समवसरण संस्थित जिनेन्द्राय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

(वसंततिलका)

ए पीठ उपर सुवर्णनी पीठ बीजी,
फेलावती अति मनोहर पीत ज्योति;
सुचिह्न आठ ध्वज सुंदर त्यां फरुके,
जे सिद्धना गुण समा अति स्वच्छ शोभे।

ॐ ह्रीं श्रीमंडपभूमि अन्तर्गत द्वितीय पीठ संयुक्त समवसरण संस्थित जिनेन्द्राय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

(सुंदरी)

पीछे दूजी आठ दिशा गनो, तहां सु आठ धुजा लहके भनो,
चक्र हाथी सिंह विषे देखिये, नभ सुमाला वृषभ सु देखिये।
गरुड कमल पताका है विषै, लसत चिन्ह सुलहकत ही दिखैं,
वसु सुमंगल द्रव्य धरि तहां, धूप घट सुंदर सौहै जहां।

ॐ ह्रीं श्रीमंडपभूमि अन्तर्गत द्वितीय पीठ अनेक रचना करी संयुक्त समवसरण संस्थित जिनेन्द्राय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

(वसंततिलका)

कान्तिमती विविध रत्नती पीठ त्रीजी, फेलावती विविध रंगनी रम्य ज्योति;
सुरहस्तना सुमन मंगल द्रव्य राजे, चउविध सुरगण पीठ पवित्र पूजे।

ॐ ह्रीं श्रीमंडपभूमि अन्तर्गत तृतीय पीठ महा शोभायमान संयुक्त समवसरण संस्थित जिनेन्द्राय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

(सुंदरी)

बनि रहे वसु जान सिवानजू, रतन जडित सुनिहवै आनजू;
लसत है जु कटहरा सारजू, पीठ तीजी ऊपर चारजू।

ॐ ह्रीं श्रीमंडपभूमि अन्तर्गत तृतीय पीठ महा शोभायमान संयुक्त समवसरण संस्थित जिनेन्द्राय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

पीठ तीन ऊपर परमानिये, लसत गंधकुटी मन आनिये,
देखिये चौकोर निहारिये, बनि रही सुन्दर सुविचारिये।

ॐ ह्रीं श्रीमंडपभूमि अन्तर्गत तृतीय पीठ पर गंधकुटी चौकोर संयुक्त समवसरण संस्थित जिनेन्द्राय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

तरु अशोक सुनयन निहारिके, भजत शोक महा भय धारके,
जडित हीरामूल सुजानिये, कनकमय शाखा परमानिये।
पत्र पन्नाके रंग देखिये, फूल लाल सुनयननि पेखिये,
फल मनोहर सुन्दर गाइये, लसत मंडप पर सो छाइये।

ॐ ह्रीं श्रीमंडपभूमि अन्तर्गत ऐसा अशोकवृक्ष श्रीमंडप ऊपर शोभायमान संयुक्त समवसरण संस्थित जिनेन्द्राय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

(शार्दूलविक्रीडित)

शोभे गंधकुटी सुगंधस्फुरति पुष्पे धूपे म्हेकती,
माला मोतीनी झूलती गगनने रत्नद्युति रंगती;
रत्नोमय शिखरो परे मनहरा लाख्खो धजा ल्हेरती,
शोभानी अधिदेवता! शुं तुजमां जगश्री मळी सामटी?

ॐ ह्रीं श्रीमंडपभूमि अन्तर्गत शोभित गंधकुटी संयुक्त समवसरण संस्थित जिनेन्द्राय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

(अडिल्ल)

गंधकुटीमें सिंहासन त्रय जानिये,
श्वेत फटिकमय जान हिये में आनिये;
नाना विधिके रतन जडे तहां पेखिये,
लटकत घंटा आदिक नयन सु देखिये।

ॐ ह्रीं श्रीमंडपभूमि अन्तर्गत तृतीय गंधकुटी संयुक्त समवसरण संस्थित जिनेन्द्राय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

(वसंततिलका)

दिव्य प्रभामय सिंहासन त्यां अनेरुं,
सुवर्णनुं, बहुमूला मणिअे जडेलुं;
दैवी सहस्रदल पंकज लाल सोहे,
जे पंकजे सुर–मनुजनुं चित्त मोहे।

(उपजाति)

ऊंचे चतुरांगुल जिन राजे,
इन्द्रो, नरेंन्द्रो, मुनिराज पूजे;
जेवुं निरालंबन आत्मद्रव्य,
तेवो निरालंबन जिनदेह।

ॐ ह्रीं श्रीमंडपभूमि अन्तर्गत कमल ऊपर चार अंगुल अंतरीक्ष बिराजमान जिनेन्द्राय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

चामर ढले चोसठ प्रभुने क्षीर-अमृत-उजळा,
शुं क्षीरसमुद्रतरंग ने गिरिनिर्झरो जिन सेवता ?

त्रण छत्र शोभे जिनशिरे जिनकीर्तिनी मूर्ति समा,
मौक्तिकप्रभा थकी चंद्र ने रत्नांशुथी भास्कर समा।

योजनविशाल अशोक तरुवर शोकतिमिर निवारतुं,
मणिस्कंध, मणिमय पत्रने मणिपुष्पथी शुं शोभतुं!

शाखा अनेक झूले अने अलिगण मधुर गुंजन करे,
शुं वृक्ष हस्त हलावतुं बहु भक्तिथी जिनने स्तवे ?

ॐ ह्रीं श्रीमंडपभूमि अन्तर्गत चामर भामंडल अशोक तरुवर संयुक्त समवसरण संस्थित जिनेन्द्राय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

(सवैया)

चार कोट वेदी पांच चौगुने सुजिनेश ते,
ऊंचे कहे गाय भइया, देखो मन लायके।
मंदिर जिनेश थान, कोट वेदी द्वार जान,
तूप मानथंभ धरै, पर्वत बनायके।
क्रीडा के सुथान, नृत्यशाला कल्पवृक्ष जान,
सिद्धारथ वृक्ष सार, सुन्दर सुलीजिये।
बारैह कोठा बीच श्री मंडप बिराजमान,
बारह गुनो ऊंचें जान, देखि प्रभु लीजिये॥

ॐ ह्रीं श्रीमंडपभूमि अन्तर्गत अनेक रचना संयुक्त समवसरण संस्थित जिनेन्द्राय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

(त्रोटक)

चतुराननशोभित जिन दीसे, अशुचि नहि दिव्य शरीर विषे;
नहि रोग, क्षुधा, न जरा तनमां न निमेष अहो! नयनांबुजमां,
मणिपुंज, सुधारस, चंद्र थकी वधु सुंदरता जिन देह तणी;
अति सौम्य प्रसन्न मुखांबुजमां भविनेत्र-अलि बहु लीन बन्यां,
जिन देह दिवाकर तेज विषे, सुरतारकवृंदनुं तेज छुपे;
रविबिंबप्रभा थकी कांति घणी जिनभास्कर-ओजसमंडलनी,
सुर-दानव-मर्त्यजनो निरखे स्वभवांतर सात प्रमोद वडे-
जिनदेहप्रभा अति पावनमां–जगना बहुमंगल दर्पणमां
घन गर्जनशी जिनवाणी झरे, भविचित्तमयूर शुं नृत्य करे!
सुर–दुंदुभिवाद्य बजे नभमां, फूलवृष्टि थती बहु योजनमां,

अति कर्ण मधुर प्रभुध्वनिमां, गणी विस्मित थाय 'शी गंभीरता',
ध्वनिधोध वडे भविचित्त भींजे, शुचि ज्ञान सूझी भवताप बुझे।

ध्वनि दिव्य निरक्षर एक भले, बहुरूप बने जीव सौ समझे;
ज्यम मेघ तणुं जल एक भले, तरुभेद वडे बहु भेद लहे।

जिननाद झीली बहु ज्ञानी बने, व्रतधारी अने निर्ग्रंथ बने;
मुनिराज गणी जिनवाणी वडे स्व-अनुभवतार अखंड करे।

ॐ ह्रीं श्रीमंडपभूमि अन्तर्गत श्री समवसरण मध्य बिराजमान श्री जिनेन्द्राय पूजनार्थे अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

श्रीमंडप संयुक्त समवसरण जिनपूजा

(अडिल्ल)

श्री मंडपमें जानि विराजे देवजू,
सुर नर पूजित पाय करें नित सेवजू;
हम पूजत सिर नाय इहां करि स्थापना,
जजत जिनेश्वर पांय लहै गुन आपना।

ॐ ह्रीं समवसरण स्थित जिनेन्द्राय अत्र अवतर अवतर संवौषट्। ॐ ह्रीं समवसरण स्थित जिनेन्द्राय अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं। ॐ ह्रीं समवसरण स्थित जिनेन्द्राय अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं परिपुष्पांजलि क्षिपेत्।

अष्टक

कंचनकी झारीमें भरकर उज्ज्वल नीर सुलावो,
जनम जरा दुःख नाशन कारण श्री जिन चरन चढावौ।
सुकारन पूजत हौं, जय समवसरण में जाय सुकारन पूजत हो,
जय श्री जिनजीके पांय, सुकारन पूजत हो।

ॐ ह्रीं समवसरण स्थित जिनेन्द्राय जन्मजरामृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

केशर में करपूर मिलाके मलियागिरि सुखरासी,
चरन पूजा जिनराज प्रभुके भव आताप विनाशी।
सुकारन पूजत हौं, जय समवसरण में जाय सुकारन पूजत हो,
जय श्री जिनजीके पाय सुकारन पूजत हो।

ॐ ह्रीं समवसरण स्थित जिनेन्द्राय संसारताप विनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

देवजीर सुखदास सुअक्षत मुक्ताफल सम आनों,
पुंज मनोहर जिनपद आगे देत अक्षय पद जानो।
सुकारन पूजत हौ०

ॐ ह्रीं समवसरण स्थित जिनेन्द्राय अक्षयपद प्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

कमल केतकी जुही चमेली बेला सरस सुहावो,
ले गुलाब जिनवर पद पुजूं कामनाशि शिव पावौ।
सुकारन पूजत हौ०

ॐ ह्रीं समवसरण स्थित जिनेन्द्राय कामबाण विध्वन्शनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

फैनी घेवर मोदक लाडू गुंझा सरस सुहाते,
क्षुधा रोग निरवारन कारन पूजत कर धर तापें।
सुकारन पूजत हौ०

ॐ ह्रीं समवसरण स्थित जिनेन्द्राय क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मनिमय दीप अमोलक लेकरि बाती तुरत प्रजाली,
मोह अंध भय रात फिरत है जगमग होत दिवाली।
सुकारन पूजत हौ०

ॐ ह्रीं समवसरण स्थित जिनेन्द्राय मोहांधकार विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

कृष्णागर करपूर कुटके धूप दशांगी खेवो,
अष्ट कर्म छिन मांहि सुजरिके छांर होत प्रभु सेवो,
सुकारन पूजत हौ०

ॐ ह्रीं समवसरण स्थित जिनेन्द्राय अष्टकर्म विनाशनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री फल लोंग सुपारी भारी पिस्ता नये चढावो,
कहत जिनेश्वर मुखतें बानी तुमहूं सुर शिव जावो।
सुकारन पूजत हौं, जय समवसरण में जाय सुकारन पूजत हो,
जय श्री जिनजीके पाय सुकारन पूजत हो।

ॐ ह्रीं समवसरण स्थित जिनेन्द्राय मोक्षफल प्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल फल अर्ध बनाय गाय गुन पढ जयमाल सुनाओ,
तुच्छ बुद्धि भविलाल पायके वांचत मन धरि सांचौ।
सुकारन पूजत हौ०

ॐ ह्रीं समवसरण स्थित जिनेन्द्राय अनर्घपद प्राप्ते अर्धम् निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

(दोहा)

समवसरणके बीचमें श्रीमंडप सुविशाल,
बीच बिराजै प्रभुजी लाल भनै जयमाल।

(धत्ता)

जय जय गुन सुंदर नमत पुरंदर धर्म धुरंधर जगत्पते,
जगमगत सुज्ञानं दुरनय भानं जोग निधानं देव नमस्ते।

(पद्धडी)

जय चार घातिया घात नमस्ते, राग दोष निवार नमस्ते।
केवल दर्शन पाय नमस्ते, परमौदारिक काय नमस्ते॥

इन्द्र पूज आनंद नमस्ते, पूजा करत सुछंद नमस्ते।
क्षीरोदधि जल लाय नमस्ते, न्हवन करत गुन गाय नमस्ते॥

वसु विध द्रव्य चढाय नमस्ते, स्तुति करत बनाय नमस्ते।
सब देवन सिरताज नमस्ते, गुनमंडित जिनराज नमस्ते॥

मोह महा हनि वज्र नमस्ते, भव्यन को सुखदाय नमस्ते।
परपरिणति परिहार नमस्ते, ज्ञान विधान सुभान नमस्ते॥

निग्रह हो जगते सुनमस्ते, धरि समाधि वैराग्य नमस्ते।
सिद्ध चिदानंदराय नमस्ते, शिवमारग दरसाय नमस्ते॥

सुर नर मिल नित ध्याय नमस्ते, वचन दया रस लीन नमस्ते।
करुणासागर देव नमस्ते, अशरन शरन जिनेश नमस्ते॥

हरिहर करि प्रभु पूज नमस्ते, लोकालोक विलोक नमस्ते।
जय जय जगआधार नमस्ते, सुर जय जय उच्चार नमस्ते॥

पंचाचार सुपाय नमस्ते, इन्द्र सु स्तुति गाय नमस्ते।
फिर निज भाल नमाय नमस्ते, मंडित नृत्य सुध्याय नमस्ते॥

थेई थेई थेई धुनि होत नमस्ते, जगमग जिनतन जोत नमस्ते।
बाजत बीन मृदंग नमस्ते, दे प्रदक्षिणा तीन नमस्ते॥

बहुविधि पुन्य उपाय नमस्ते, जय जय जय सुखदाय नमस्ते।
प्रातिहार्य वसुपाय नमस्ते, वृक्ष अशोक जुगाय नमस्ते॥

सुर वरसावत फूल नमस्ते, वाणी खिरत जिनेश नमस्ते।
गणधर झेलत वाणी नमस्ते, तीन छत्र सिर धार नमस्ते॥

झिलत सुचौसठ चमर नमस्ते, सिंहासन थिर देख नमस्ते।
भामंडल भव पेख नमस्ते, बजत दुंदुभी द्वार नमस्ते॥

गुन अनंत विख्यात नमस्ते, क्षमावान गुनवान नमस्ते।
तुच्छ बुद्धि भविलाल नमस्ते, भव वारिधि तैं तारन नमस्ते॥

(धत्ता)

श्री अरिहंत जिनेशकी, गूंथी शुभ जयमाल,
जो पहिरे भवकंठमें जिनके भाग्य विशाल।

ॐ ह्रीं समवसरण स्थित जिनेन्द्राय पूर्णार्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।

(अडिल्ल)

जो वांचे यह पाठ सरस मन लायके,
सुने भव्य दे कान सु मन हरषायके;
धन धान्यादिक पुत्र पौत्र संपत्ति धरै,
नर सुरके सुख भोग बहुरि शिव तिय वरै।

।। इति आशीर्वादः ।।

श्री जिनमुखोद्‌भव दिव्यध्वनि पूजा

(छप्पय)

जिनवरकी ध्वनि मेघध्वनि सम मुखतैं गरजे
गणधरके श्रुति भूमि वरषि अक्षर पद सरजै
सकल तत्त्व परकास करै जगताप निवारै
हेय अहेय विधान लोक नीकै मनधारै।

(दोहा)

जनम जरा मृत्यु छय करै, हरै कुनय जडरीति;
भवसागरसों ले तिरै, पूजै जिनवच प्रीति।

ॐ ह्रीं श्री जिनमुखोद्‌भवसरस्वतिवाग्वादिनि ! अत्र अवतर अवतर ! संवौषट्, अत्र तिष्ठ तिष्ठ! ठः ठः,—अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

(त्रिभंगी)

क्षीरोदधि गंगा, विमल तरंगा, सलिल अभंगा, सुखसंगा,
भरि कंचन झारी, धार निकारी, तृषा निवारी, हितचंगा;
तीर्थंकर की धुनि, गणधरने सुनि, अंग रचे चुनि ज्ञानमई,
सो जिनवरवानी, शिवसुखदानी, त्रिभुवन मानी पूज्य भई।

ॐ ह्रीं श्री जिनमुखोद्‌भवसरस्वतीदेव्यै जलं निर्वपामीति स्वाहा।

करपूर मंगाया, चंदन आया, केशर लाया, रंग भरी;
शारदपद वंदों, मन अभिनंदों, पाप निकंदो, दाह हरी।
तीर्थंकर की धुनि, गणधरने सुनि, अंग रचे चुनि ज्ञानमई,
सो जिनवरवानी, शिवसुखदानी, त्रिभुवन मानी पूज्य भई।

ॐ ह्रीं श्री जिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

सुखदास कमोदं, धारकमोदं, अति अनुमोदं, चंदसमं;
बहु भक्ति बढाई, कीरति गाई, होहु सहाई, मात ममं। तीर्थं०

ॐ ह्रीं श्री जिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

बहु फूल सुवासं, विमलप्रकाशं, आनंदरासं, लाय धरे;
मम काम मिटायो, शील बढायो, सुख उपजायो, दोष हरे। तीर्थं०

ॐ ह्रीं श्री जिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

पकवान बनाया, बहु घृत लाया, सब विध भाया, मिष्ट महा,
पूजूं थुति गाऊं, प्रीति बढाऊं, क्षुधा नशाऊं, हर्ष लहा। तीर्थं०

ॐ ह्रीं श्री जिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

करि दीपक जोतं, तमछय होतं, ज्योति उदोतं, तुमहिं चढै;
तुम हो परकाशक, भरम विनाशक, हम घट भासक, ज्ञान बढै। तीर्थं०

ॐ ह्रीं श्री जिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

शुभ गंध दशोकर, पावकमें, धूर धूप मनोहर खेवत हैं;
सब पाप जलावैं, पुण्य कमावैं, दास कहावैं सेवत हैं। तीर्थं०

ॐ ह्रीं श्री जिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

बादाम छुहारी, लोंग सुपारी श्रीफल भारी, ल्यावत हैं,
मनवांछित दाता, मेट असाता, तुम गुन माता, ध्यावत हैं। तीर्थं०

ॐ ह्रीं श्री जिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै फलं निर्वपामीति स्वाहा।

नयननसुखकारी, मृदुगुनधारी, उज्ज्वल भारी, मोल धरैं;
शुभगंध सम्हारा, वसन निहारा, तुम–मन–धारा, ज्ञान करैं। तीर्थं०

ॐ ह्रीं श्री जिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

(दोहा)

श्री जिनवरजी के समोसरणके मांहि,
या विधि सै वानी खिरै, सुनतें पातिग जाय।

(अडिल्ल)

एक दिवस अरु रात तासुके जानिये,
संध्याकाल सुचार हिये में आनिये;
तिनमें छः छः घडी प्रभुवानी खिरै,
भवि जीवन सुखदाय सुनत पातग हरै।

हलैं नाही जीभ होठ सुजिय इह जानिये,
अरु अनक्षरी शब्द जिनेश प्रमानिये।
निकसै ध्वनी सर्वांग सरस सुखकारजू,
सुर नर मुनिगन सुनत लहै भवपारजू।

(दोहा)

गाज होत आकाशमें तैसो ध्वनि को सोर,
सुनिके सुर नर हरख करि नाचत भविजन मोर।

(सवैया ३१ सा)

वानीको निमित्त पाय जीव देश देशनके,
जैसी भाषा बोलै सोऊ समझे बनायके।
जैसो अभिप्राय पूछने को होय जीव के,
तैसो ही अरथ जान रहे हरखायके।
जैसो उपदेश योग्य जीव होय ताकों तैसो,
लागे उपदेश देत वानीको बतायके।
ऐसी वानी सार सोतो हियेमें विचार जीव,
सुनत श्रवण सुखदाई शर्म पायकें।

(दोहा)

जब धुनि श्री जिनराजकी, सुनै जीव मन लाय;
श्रवण सुइन्द्री निकट जा, अक्षर रूप सु लहाय।

(पद्धडी)

सुनि समझै जीव भले प्रकार, स्वयमेव सुजाने अर्थ सार।
मुख बोले जय जय वचन गाय, दृग देख दरस आनंद पाय।
जगमें जयवंते होउ, देव, सुरनर इन्द्रादिक करे सेव।
उपदेश पाय जगतें सु पार, ते जीव होत आनंदधार।

ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भव सरस्वतीदेव्यै महार्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा– ऐसे श्री जिनराज पद, जगमग होत विशाल,
देखन शिवसुख पाइये, लाल नमावत भाल।

॥ इति आशीर्वादः ॥

समवसरण स्थित सर्व साधु पूजा

(दोहा)

चहुं गति दुःखसागर विषें, तारणतरण जिहाज;
रत्नत्रयनिधि नगन तन, धन्य महा मुनिराज।

ॐ ह्रीँ श्री आचार्योपाध्यायसर्वसाधुसमूह ! अत्र अवतर अवतर संवौषट्–अत्र तिष्ठ तिष्ठ ! ठः ठः स्थापनं, अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्, सन्निधिकरणं।

(गीता)

शुचि नीर निरमल क्षीरदधिसम, सुगुरुचरण चढाइयो,
तिहुं धार तिहुं गद टारि स्वामी, अति उछाह बढाइयो;
भव भोग तन–वैराग धार, निहार शिव तप तपत हैं,
तिहुं जगतनाथ अराध साधु, सुपूज नित गुण जपत हैं।

ॐ ह्रीँ श्री समवसरणस्थित आचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

करपूर चंदन सलिलसौं घिसि, सुगुरुपद पूजा करौं;
सब पाप-ताप मिटाव स्वामी, धर्म शीतल विस्तरौं।
भव भोग तन–वैराग धार, निहार शिव तप तपत हैं,
तिहुं जगतनाथ अराध साधु, सुपूज नित गुण जपत हैं।

ॐ ह्रीँ श्री समवसरणस्थित आचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यो भवतापविनाशाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

तंदुल कमोद सुवास उज्ज्वल, सुगुरुपदतर धरत हैं;
गुणकार औगुणहार स्वामी, वंदना हम करत हैं। भवभोग०

ॐ ह्रीँ श्री समवसरणस्थित आचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

शुभ फूलराश सुवास उत्तम, सुगुरु पांयनि परत हौं;
निरवार मार उपाधि स्वामी, शील दिढ उर धरत हौं। भवभोग०

ॐ ह्रीँ श्री आचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यो कामबाणविनाशाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

पकवान मिष्ट सलौन सुंदर, सुगुरु पांयनि प्रीतसौं;
कर क्षुधारोग विनाश स्वामी, सुथिर कीजे रीतिसौं। भवभोग०

ॐ ह्रीँ श्री आचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यो क्षुधारोगविनाशाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दीपक उदोत सजोत जगमग, सुगुरु पद पूजौ सदा;
तमनाश ज्ञान उजास स्वामी, मोहि मोह न हो कदा। भवभोग०

ॐ ह्रीँ श्री आचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यो मोहान्धकारविनाशाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

बहु अगर आदि सुगंध खेऊं, सुगुरु पद पद्महिं खरे;
दुख पुंज काठ जलाय स्वामी, गुण अखय चितमें धरे। भवभोग०

ॐ ह्रीँ श्री आचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

भर थार पूंग बदाम बहुविध सुगुरु क्रम आगे धरों;
मंगल महाफल करो स्वामी, जोर कर विनती करों। भवभोग०

ॐ ह्रीँ श्री आचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल गन्ध अक्षत फूल नेवज, दीप धूप फलावली,
'द्यानत' सुगुरुपद देहु स्वामी, हमहिं तार उतावली। भवभोग०

ॐ ह्रीं श्रीआचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

(दोहा)

कनक–कामिनी–विषयवश, दीसै सब संसार;
त्यागी वैरागी महा, साधु–सुगुन–भंडार। १

(पद्धडी)

प्रणमामि परमगुरु नगनवत जे मूलोत्तर गुन धरन सत।
बावीस पर्राषह सहतशूर, गिरिशिर तरुतल सर तीर पूर॥

लखि जगत अथिर निजनिद मूल, सुख दुख तृन धन अरि मित्र तूल।
जिन आतम लीन विरक्त देह, जे मुक्ति वधू उर धर सनेह॥

जे दो विध संजम धरन धीर, जे द्वादश तप तप तपत वीर।
जे त्रोदश विधि चारित्र धारि, ते साधु नमों उर गुन चितारि।५।

जे मास दोय चव षट प्रजंत, कचलौच करें निज कर महन्त।
जिनके व्रत मंत्रनतै सुन्हान, जे धर्म शुकल ध्यावत सु ध्यान।६।

जे शास्त्र कमंडलु मोरपिच्छ, महा कोमल तार खुलीर तुच्छ।
थुरमोली शरद लगे न जास, संजम कारन राखैं जु पास।७।

जे षट रस त्यागत लै अहार, उपशांत क्षुधा वृष काज सार।
षट आवश्यक संजम सुपक्ष, वैयावृत पालन प्रान रक्ष।८।

सिर नामि प्रजंतन द्वार जेह, नहिं करत प्रवेश गृहस्थ गेह।
जे अन्तराय मल दोष टार, इक बार असन पख मासकार।९।

जे कारन पंच न असन लेत, बलवृद्धि न काज न स्वाद हेत।
तनवर्द्धन काज न देह क्रांति, नहि वर्द्धन आउ सदा जु शान्ति।१०।

लखि अति उपसर्ग दया अभाव, अति रोग विषैं नहिं असन चाव।
ब्रह्मचर्य भाव संन्यास माँहि, इन कारन लघु भोजन कराहिं।११।

जे वीरासन खड़्गासनीय, धनुषासन वज्रासन मुनीय।
गोदोहन पदमासन जु वीर, नाना विध आसन धरन धीर।१२।

जिनके पन विधि स्वाध्याय चित्त, स्वाध्याय वाचना माँहि नित।
जे चार सुधाता पायवेश, स्वाध्याय करें सब ही मुनेश।१३।

जे तीन वरन धर तन निरोग, वासी सुदेस निष्काय जोग।
इन्द्री सुपूर्ण पुनि पूर्ण देह, दीक्षा धर वर नर चिन्ह येह।२२।

जिनके जिन–वचनन सों उछाहि, सुनिये पुनि धारन ग्रहन ताहि।
सुविचारत तत्त्वस्वरूप भाव, जे दीक्षा धर नर गुन लखाव।२३।

कहुं अवधिज्ञान बिन तुरिय ज्ञान, कहुँ मनपरजय बिन अवधि जान।
मनपरजय अवधि विना ऋषीस, लहि केवलज्ञान समस्त दीस।२४।

जे चढ़ि अजोग गुन थल विशाल, लघु पंचाक्षर उच्चरन काल।
लागे जो ता उत काल वास तहाँ तिष्टि सकल करि कर्म्म नास।२५।

जे पंडित पंडित—मरन पाय, इक समय विषै शिवलोक जाय।
ते गुरु गुन उरधर भक्तवृंद प्रणमै त्रिकाल नित शीष नाय।२६।

ॐ ह्रीँ समवसरण स्थित सर्वआचार्यउपाध्यायसाधुगुरुभ्यो अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

समुच्चय जयमाला

(कडखा)

होत वैराग लौकातसुर बोधियो,
फेरी शिविकासु चढि गहन निजसाधियो।
घाति चौघातिया ज्ञानकेवल भयो,
समवसरनादि धनदेव तब निरमयो॥

एक हैं इन्द्रनीली शिला रत्न की,
गोल सुंदर बनी भूमि दिव्य अहा।
चार दिश पैंडिका बीस हज्जार है,
रत्नके चूरका कोट निरधार है।।

कोट चहुँ ओर चहुँद्वार तोरन खंचे,
तास आगे चहुँ मानथम्भा रचे।
मान मानी तजै जास दिग जायकै,
नम्रता धार सेवैं तुम्है आयकैं।।

बिम्ब सिंहासनो पै जहाँ सोहही,
इन्द्र नागेन्द्र केते मनै मोहही।
वापिका वारिसों जत्र सोहै भरी,
जासमें न्हात ही पाप जावै टरी।।

तास आगे भरी खातिका वारिसो,
हंस सूआदि पंखी रमै प्यारसों।
पुष्प की वाटिका बाग वृच्छें जहाँ,
फूल औ श्रीफले सर्वही हैं तहाँ।।

कोट सौवर्ण का तास आगे खड़ा,
चार दर्वाज चौ ओर रत्नों जड़ा।
चार उद्यान चारों दिशा में गना,
है धुजा पंक्ति औ नाटशाला बना।।

तासु आगे त्रिती कोट रूपामयी,
तूप नौ जास चारों दिशा में ठयी।
धाम सिद्धान्तधारीन के हैं जहाँ,
औ सभा भूमि है भव्य तिष्ठै तहाँ।।

तास आगे रची गन्धकूटी महा,
तीन हैं कट्टिनी सारशोभा लहा।

एकपैं तौ निधैं ही धरी ख्यात हैं,
भव्य प्रानी तहाँ लौं सबै जात हैं ।।
दूसरी पीठ पै चक्रधारी गमै,
तीसरे प्रतिहार्ये लसै भाग में ।
तासपै वेदिका चार थम्भान की,
है बनी सर्व कल्याण के खान की ।।
तासपै है सुसिंहासनं भासनं,
जासपै पद्म प्राफुल्ल है आसनं ।
तासुपै अन्तरीक्षं विराजै सही,
तीन छत्रे फिरें शीस रत्नै यही ।।
वृक्ष शोकापहारी अशोकं लसै,
दुन्दुभी नाद औ पुष्प खंते खसै ।
देव की ज्योति सों मंडलाकार है,
सात भव भव्य तामें लखै सार है ।।
दिव्यवानी खिरै सर्व शंका हरै,
श्री गनाधीश झेलैं सुशक्ति धरै ।
धर्मचक्री तुम ही कर्मवक्री हने,
सर्वशक्री नमैं मोद धारै घने ।।
हे कृपासिंधु मोपै कृपा धारिये,
घोर संसारसों शीघ्र मो तारिये ।।

ॐ ह्रीँ समवसरण संस्थित चौवीस जिनेन्द्र पूजनार्थे अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

(वसंततिलका)

अंकुर एक नथी मोह तणो रह्यो ज्यां;
अज्ञान–अंश बळी भस्मरूपे थयो ज्यां;
आनंद, ज्ञान, निज वीर्य अनंत छे ज्यां,
त्यां स्थान मागुं–जिननां चरणांम्बुजोमां ।

जे आभमां जगत आ परमाणुतुल्य,
ते अंतहीन नभनुं जहीं पूर्ण ज्ञान;
सौ द्रव्यना युगपदे त्रण काल जाणे,
ते नाथने नमन हो मुज नम्र भावे।

दैवी समोसरणमां नहि राग किंचित्,
धूलि मलिन पण ज्यां नहि द्वेष किंचित्;
धूलि, समोसरण केवल ज्ञेय जेमां,
ते ज्ञानने नमन हो जिनजी! अमारां।

(शिखरिणी)

भले सो इन्द्रोना, तुज चरणमां शिर नमता,
भले इन्द्राणीना रतनमय स्वस्तिक बनता;
नथी अे ज्ञेयोमां तुज परिणति सन्मुख जरा,
स्वरूपे डूबेला, नमन तुजने, ओ जिनवरा!

ॐ ह्रीं समवसरण संस्थित जिनेन्द्राय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

जो वांचे यह पाठ सरस मन लायके,
सुने भव्य दे कान सु मन हरषायके।
धनधान्यादिक पुत्र पौत्र सम्पति वरे,
सुरनरके सुख भोगि बहुरि शिवतिय वरे।

॥ इत्याशीर्वादः ॥

इति समवसरण विधान पूजा समाप्त

श्री आदिनाथ-जिनपूजा

(अडिल्ल)

कर्मभूमिकी आदि रिषभ जिनवर भये,
धर्मपंथ दरशाय, सकल जग सुख दये;
तिनके पद उर ध्याई हरष मनमें धरुं,
अत्र तिष्ठ जिनराज चरण पूजा करुं।

ॐ ह्रीँ श्रीआदिनाथजिनेन्द्र! अत्र अवतर अवतर संवौषट्,

ॐ ह्रीँ श्री आदिनाथजिनेद्र! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीँ श्री आदिनाथजिनेन्द्र! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं।

(सुंदरी)

परम पावन उज्ज्वल लायके, जल जिनेश्वर चरण चढायके;
जनम मरण त्रिदोष सबै हरुं, रिषभदेव चरणपूजा करुं।

ॐ ह्रीँ श्रीआदिनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

सरस चंदन गंध सुहावनो, परम शीतल गुण मन भावनो;
जन्मताप तृषादुखको हरुं, रिषभदेव चरणपूजा करुं।

ॐ ह्रीँ श्री आदिनाथजिनेन्द्राय भवतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

शरद इन्दु समान सुहावनो, अमल अक्षत स्वच्छ प्रभावनो;
सहज रुप सुधी रमणी वरुं, रिषभदेव चरणपूजा करुं।

ॐ ह्रीँ श्री आदिनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

कुसुमरत्न सुवर्णमई करों, कनक भाजनमें बहुते भरों;
मदनबान महादुःखको हरुं, रिषभदेव चरणपूजा करुं।

ॐ ह्रीँ श्री आदिनाथजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

सरस मोदन पावक लीजिये, चरु अनेक प्रकार सुकीजिये;
असदवेद्य क्षुधा दुखको हरुं, रिषभदेव चरणपूजा करुं।

ॐ ह्रीँ श्री आदिनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रतनदीप अमोलक लीजिये, निज सुयोग्य मनोहर कीजिये;
अतुल मोहमहातम को हरुं, रिषभदेव चरणपूजा करुं।

ॐ ह्रीँ श्री आदिनाथजिनेन्द्राय मोहांधकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

सरस धूप सुगंध सुहावनी, अगर आदिक द्रव्य सुपावनी;
धूप खेय दुखद विधिको हरुं, रिषभदेव चरणपूजा करुं।

ॐ ह्रीँ श्री आदिनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

सरस मिष्ट फलावलि लीजिये, चरण जिनवर भेट करीजिये;
सहज रूप सुधी रमणी वरुं, रिषभदेव चरणपूजा करुं।

ॐ ह्रीँ श्री आदिनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जलफलादिक द्रव्य मिलायके, कनकथाल सु अर्घ बनायके;
निज स्वभाव अरी विधिको हरुं, रिषभदेव चरणपूजा करुं।

ॐ ह्रीँ श्री आदिनाथजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

(दोहा)

आदि धर्म करता प्रभु, आदि ब्रह्म जगदीश,
तीर्थंकर पद जिहि लयौ, प्रथम नवाऊं शीश।

(भुजंगप्रयात)

नमो देव देवेन्द्र तुम चर्ण ध्यावै,
नमो देव इन्द्रादि सेवक रहावै;
नमो देव तुमको तुम्ही सुक्खदाता,
नमो देव मेरी हरो दुःख असाता। १

तुम्ही ब्रह्मरूपी सुब्रह्मा कहावौ,
तुम्ही विष्णु स्वामी चराचर लखावौ;
तुम्ही देव जगदीश सर्वज्ञ नामी,
तुम्ही देव तीर्थेश नामी अकामी। २

सुशंकर तुम्ही हो तुम्ही सुकखकारी,
सुजन्मादि त्रयपुर तुम्ही हो विदारी;
धरैं ध्यान जो जीव जगके मझारी,
करैं नाश विधिको लहैं ज्ञान भारी। ३

स्वयंभू तुम्ही हो महादेव नामी
महेश्वर तुम्ही हो तुम्ही लोकस्वामी;
तुम्हें ध्यानमें जो लखें पुन्यवंता,
वही मुक्तिको राज विलसैं अनंता। ४

तुम्ही हो विधाता तुम्ही नंददाता,
नमै जो तुम्हें सो सदानंद पाता;
हरौ कर्मके फंद दुखकंद मेरे,
निजानंद दीजै नमों चर्ण तेरे। ५

महा मोहको मारि निज राज लीनौ,
महाज्ञानको धारि शिववास कीनौ;
सुनो अर्ज मेरी रिषभदेव स्वामी,
मुझे वास निज पास दीजे सुधामी। ६

(दोहा)

नाभिराय मरुदेवी सुत, सदा तुम्हारी आस;
मनवचकाय लगायके, नमे जिनेश्वरदास। १

ॐ ह्रीं श्री आदिनाथजिनेन्द्राय महाअर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

(पद्धडी)

वर्तमान जिनराय भरत के जानिये,
पंचकल्याणक धारि गये शिव थानिये;
जो नर मनवचकाय प्रभू पूजै सही,
सो नर दिवसुख पाय लहै अष्टम मही।

॥ इत्याशीर्वादः। पुष्पांजलिं क्षिपेत्॥

श्री महावीर-जिनपूजा

(वसंततिलका)

हे देव! पूज्य वर्धमान यहां पधारो,
आह्वानन मैं करत तिष्ट सुतिष्ठ तारो,
कीनों पवित्र वीरको उपदेश सारो,
पूजों सदा तव पदाब्ज भवाब्धि तारो।

ॐ ह्रीँ श्री महावीरजिनेन्द्र! अत्र अवतर अवतर संवौषट् (आह्वाननं)
ॐ ह्रीँ श्री महावीरजिनेन्द्र! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः (स्थापनं)
ॐ ह्रीँ श्री महावीरजिनेन्द्र! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्। (सन्निधिकरणं)

(त्रिभंगी)

अघभेदन दच्छं, शशि सम स्वच्छं, तर्पित अच्छं, नीर भरो,
तसु धारा धारो, तृषा निवारो, कर्म विदारो, पूज करो;
चरम तीर्थंकर जगत हितंकर, हे अभयंकर, वीर जिनं,
सब कर्म क्षयंकर, दया धुरंधर, जगजनशंकर, शर्म घनं। १

ॐ ह्रीँ श्री महावीरजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

अघ कर्म निवारण; शीतल कारण; गंधसे पूजन, नित्य करों
जय अधम उधारण, हे भवतारण, करुणाकारण, अर्ज करों। च०

ॐ ह्रीँ श्री महावीरजिनेन्द्राय भवतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

भरि अक्षत थारी, अक्षनहारी, तुम पद धारी सो अर्चो,
अक्षयपदधारी, भवभवतारी; अति सुखकारी, सो पिरचा। च०

ॐ ह्रीँ श्री महावीरजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

मदमदन विभंजन, भवभयभंजन, शिववधुरंजन, विश्वयते
शुभ कमल चढाऊं, कमला पाऊं, अमला ध्याऊं जगदिदत। च०

ॐ ह्रीँ श्री महावीरजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

सब मोदन मोदक रसना मोहन, कर्म विमोचन, सद्य करो,
नैवेद्य चढाऊं, पूज रचाऊं, गुणगण गाऊं, पूज करो।
चरम तीर्थंकर जगत हितंकर, हे अभयंकर, वीर जिनं,
सब कर्म क्षयंकर, दया धुरंधर, जगजनशंकर, शर्म घनं॥

ॐ ह्रीँ श्री महावीरजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मिथ्यान्ध निवारा, अति उजियारा, दीपक धारा, पूज करों,
करुं तुम पद आरति, नाशे आरति, भासे भारति, ज्ञान धरों। च०

ॐ ह्रीँ श्री महावीरजिनेन्द्राय मोहांधकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

बहु धूप अनलमें कर्म जलनमें, लयो शरणमें, चरणनमें,
हे दूरीकृतमद, देहु मोक्षपद, पूजत तुम पद सेवनमें। च०

ॐ ह्रीँ श्री महावीरजिनेन्द्राय दुष्टाष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

बादाम सुश्रीफल, बहु पुंगीफल, ले अनेक फल सों अर्च्यो;
बहु थार भराऊं, तुम यश गाऊं शिवसुख पाउं सोभर्च्यो। च०

ॐ ह्रीँ श्री महावीरजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

पावन जल चंदन, अक्षत पुष्प रु चरु वर दीपन, धूप धरों;
वर अर्घ उतारो, तुम पद धारो, नंदन तारो, पूज करो। च०

ॐ ह्रीँ श्री महावीरजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

(दोहा)

सनमति सनमति द्यो मुझे, हो सनमति दातार,
उहै भक्ति पावन जगत, होय अमल विसतार। १

(पद्धडी)

जय महावीर दुति अमल भान, सिद्धारथ चित अंबुज फुलान,
जय त्रिशला चखि कुमुदनि अनूप, प्रफुलावनकूं मुख चंदरूप। २

जय कुंडलपुर जिन जन्मस्थान, हरिवंस व्यौममधि सुष्ठु भान,
जय कनक वरन कर सप्त काय, हरि चिह्न बहत्तर बरस आय। ३

जय इन्द्र कह्यो अति वीर सूर, सुनि देव चल्यौ ह्वे सर्प क्रूर,
फुंकार ज्वाल विकराल देख, क्रीडत कुमार भाजे विशेख। ४

प्रभु धीर महा पनंग अज्ञान, नरि क्रीड हर्यो मदको वितान,
ह्वै प्रगट नय पूजि पाय, परसंसि कह्यो महावीर राय। ५

लखि पूरव भव अनुप्रेक्ष चिंत, भयभीत भये भवतैं अत्यंत,
लौकांतिक आय थुति पूजि पाय, निज थान गये असुर आय। ६

रचि शिबिका करि उत्सव अपार वन जाय धरे प्रभु तजि सिंगार,
नुति सिद्ध लौंच कच नगन थाय, धरि षष्टम लय चिद्रूप लाय। ७

तप द्वादस द्वादस वर्ष ठान, चउ घाति हने गहि खड्ग ध्यान,
जय नंतचतुष्टय लब्ध देव, वसु प्रातिहार्य अतिसे सुमेव। ८

जय भव्यनिकर भवसिंधु तार, मैं प्रणमूं जुग कर सीस धार,
जय समर विट पजारन-हुताश, जय मोहतिमिर नासन-प्रकाश। ९

जय दोष अठारा रहित देव; मुझ देहु सदा तुम चरण सेव,
हुं करुं विनंती जोरि हाथ, भवतारनतरन निहारि नाथ। १०

(धत्ता)

श्री वीर जिनेश्वर नमत सुरेश्वर वसुविधि करि जुग पद चरचं,
बहु तूर बजावैं गुणगण गावैं, 'रामचंद' मन अतिहरषं। ११

ॐ ह्रीं श्री महावीरजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये महार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

❀

श्री धातकीविदेह-भाविजिनपूजा

(जोगीरासा)

धातकी खंड विदेहधाम बहु आनंदमंगळकारी,
ज्यां वर्षे तीर्थंकर प्रभुनो ध्वनि शाश्वत सुखकारी;
तत्र बिराजे त्रिभुवन तारक भाविना भगवंता,
अहो! पधार्या भरतभूमिमां करुणामूर्ति जिणंदा।

ॐ ह्रीं धातकीद्वीपे विदेहक्षेत्रे भविष्यत् देवाधिदेव श्री तीर्थंकरदेव ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् इत्याह्वानम् ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः इति स्थापनम् ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् इति सन्निधिकरणम् !

(नंदीश्वर श्री जिनधाम)

क्षीरोदधिथी भरी नीर, कंचन कळश भरी,
प्रभु तव पद पूजुं जाय आवागमन टळी;
अहो! धातकीखंड जिणंद भावी मनहारी,
जंबू-भरते जयवंत, शिव - मंगळकारी।
(–स्वर्णे वर्ते जयवंत, शिव - मंगळकारी।)

ॐ ह्रीं धातकीद्वीपे विदेहक्षेत्रे भविष्यत्-देवाधिदेव श्री तीर्थंकरनाथ-चरण-कमलपूजनार्थं जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

मलयागिरि चंदन साथ केसर घसी लाउं,
मम भव आताप नशाव, प्रभु तुज पाय पडुं;
अहो! धातकीखंड जिणंद भावी मनहारी,
जंबू-भरते जयवंत, शिव - मंगळकारी।
(–स्वर्णे वर्ते जयवंत, शिव - मंगळकारी।)

ॐ ह्रीं धातकीद्वीपे विदेहक्षेत्रे भविष्यत्-देवाधिदेव श्री तीर्थंकरनाथ-चरण-कमलपूजनार्थं संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रक्षालित अक्षत शुद्ध, कंचन थाल भरुं,
अक्षय पद प्राप्ति काज प्रभु पद पूज करुं;
अहो! धातकीखंड जिणंद भावी मनहारी,
जंबू-भरते जयवंत, शिव - मंगळकारी ।
(–स्वर्णे वर्ते जयवंत, शिव - मंगळकारी ।)

ॐ ह्रीं धातकीद्वीपे विदेहक्षेत्रे भविष्यत्-देवाधिदेव श्री तीर्थंकरनाथ-चरण-कमलपूजनार्थं अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

जासुद, चंपा, सुगुलाब, सुरभि थाळ भरुं,
मम कामबाण कर नाश, प्रभु तुज चरण धरुं;
अहो! धातकीखंड जिणंद भावी मनहारी,
जंबू-भरते जयवंत, शिव - मंगळकारी ।
(–स्वर्णे वर्ते जयवंत, शिव - मंगळकारी ।)

ॐ ह्रीं धातकीद्वीपे विदेहक्षेत्रे भविष्यत्-देवाधिदेव श्री तीर्थंकरनाथ-चरण-कमलपूजनार्थं कामबाणविनाशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

फेणी खाजा पकवान, मोदक भरी लावुं,
मम क्षुधारोग निरवार, प्रभु सन्मुख जाउं;
अहो! धातकीखंड जिणंद भावी मनहारी,
जंबू-भरते जयवंत, शिव - मंगळकारी ।
(–स्वर्णे वर्ते जयवंत, शिव - मंगळकारी ।)

ॐ ह्रीं धातकीद्वीपे विदेहक्षेत्रे भविष्यत्-देवाधिदेव श्री तीर्थंकरनाथ-चरण-कमलपूजनार्थं क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूजुं मणिदीप हजूर, आतमज्योति जगे,
कर मोह तिमिरने दूर, भवनो भय भागे;
अहो! धातकीखंड जिणंद भावी मनहारी,
जंबू-भरते जयवंत, शिव - मंगळकारी ।
(–स्वर्णे वर्ते जयवंत, शिव - मंगळकारी ।)

ॐ ह्रीं धातकीद्वीपे विदेहक्षेत्रे भविष्यत्-देवाधिदेव श्री तीर्थंकरनाथ-चरण-कमलपूजनार्थं मोहांधकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

लई अगर तगर कर्पूर दश विधि धूप करी,
प्रभु सन्मुख खेउं जाय कर्म कलंक बळी;
अहो! धातकीखंड जिणंद भावी मनहारी,
जंबू-भरते जयवंत, शिव - मंगळकारी।
(–स्वर्णे वर्ते जयवंत, शिव - मंगळकारी।)

ॐ ह्रीं धातकीद्वीपे विदेहक्षेत्रे भविष्यत्-देवाधिदेव श्री तीर्थंकरनाथ-चरण-कमलपूजनार्थं अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

पिस्ता किसमिस बादाम, श्रीफळ सोपारी,
मागुं शिवफळ तत्काळ, प्रभुपद बलिहारी;
अहो! धातकीखंड जिणंद भावी मनहारी,
जंबू-भरते जयवंत, शिव - मंगळकारी।
(–स्वर्णे वर्ते जयवंत, शिव - मंगळकारी।)

ॐ ह्रीं धातकीद्वीपे विदेहक्षेत्रे भविष्यत्-देवाधिदेव श्री तीर्थंकरनाथ-चरण-कमलपूजनार्थं मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल गंध सुअक्षत पुष्प, शुभ नैवेद्य धरुं,
लई दीप धूप फळ अर्घ, जिनवर पूज करुं;
अहो! धातकीखंड जिणंद भावी मनहारी,
जंबू-भरते जयवंत, शिव - मंगळकारी।
(–स्वर्णे वर्ते जयवंत, शिव - मंगळकारी।)

ॐ ह्रीं धातकीद्वीपे विदेहक्षेत्रे भविष्यत्-देवाधिदेव श्री तीर्थंकरनाथ-चरण-कमलपूजनार्थं अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

(जिनेश्वर बसो हृदयके माँहि...)

भावि तीरथनाथकी जी महिमा अतुल महान,
सुर-नर-मुनि जिनके सदा जी, प्रणमें निशदिन पाय,
जिनेश्वर बसो हृदयके मांहि...

द्वीप धातकी खंडमें जी, विदेहधाम सुख खान,
विचरे तीर्थंकर प्रभु जी, करते भवि कल्याण,
जिनेश्वर बसो हृदयके मांहि...

धन्य दिवस घडी धन्य है जी, धन्य धन्य अवतार,
भावि जिनवर चरणमें जी, लाग्यो चित्त बडभाग,
जिनेश्वर बसो हृदयके मांहि...

धन्य युगल पद होय तब जी, मैं पहुंचुं तुम पास,
धन्य हृदय हो ध्यानतें जी, ध्याऊं निज हित काज,
जिनेश्वर बसो हृदयके मांहि...

दरश करत तव चरणके जी, चक्षु धन्य तब थाय,
सफल करणयुग होत तब जी, वचन सुने जिनराय,
जिनेश्वर बसो हृदयके मांहि...

पूज करूं तव चरणकी जी, करयुग धनि तब थाय,
शीस धन्य तब ही हुये जी, नमत चरण जिनराय,
जिनेश्वर बसो हृदयके मांहि...

मैं दुखिया संसारमें जी, तुम करुणानिधि देव,
हरे दुख यह मो तणो जी, करी हों तुम पद सेव,
जिनेश्वर बसो हृदयके मांहि...

स्वरूप तिहारो हृदय विषे जी, धारूं मन वच काय,
भवसागरको भय मिट्यो जी, यातें त्रिभुवन राय,
जिनेश्वर बसो हृदयके मांहि...

भावि जिनवर चरणकी जी, भरी भक्ति उर मांहि,
निजस्वरूपमय कीजिये जी, भव संतति-मिट जाय,
जिनेश्वर बसो हृदयके मांहि...

ॐ ह्रीं श्री धातकीद्वीपे विदेहक्षेत्रे भविष्यत्‌देवाधिदेव श्री तीर्थंकरनाथ-चरण-कमलपूजनार्थं अनर्घपदप्राप्तये पूर्णार्घं निर्वपमीति स्वाहा।

स्वानुभूति-तीर्थ सुवर्णपुरी पूजा

(राग--सम्यक् सुक्षायिक जान)

स्वात्मानुभूति-प्रधान सुमंगल-स्वर्णपुरी,
संतोकी साधनाभूमि, अध्यातम तीर्थ बनी,
तू परमातमा है, ये गाजे गुरुवाणी,
गुरुकहानका यह वरदान, सुंदर स्वर्णपुरी ।।

ॐ ह्रीं श्री सौराष्ट्रदेशस्थ स्वर्णपुरीतीर्थे सर्वजिनायतनेषु विराजमान-जिनबिंबानि ! अत्रावतर अवतर अवतर संवोषट् इति आह्वानम्।

ॐ ह्रीं श्री सौराष्ट्रदेशस्थ स्वर्णपुरीतीर्थे सर्वजिनायतनेषु विराजमान-जिनबिंबानि ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः इति स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्री सौराष्ट्रदेशस्थ स्वर्णपुरीतीर्थे सर्वजिनायतने विराजमान-जिनबिंबानि ! अत्र मम सन्निहितानि भव भव, इति सन्निधिकरणम्।

उज्ज्वल जल शितल लाय सुवरण कलश भरे,
सब जिनवरजीको चढ़ाय ज्ञानामृत पावे,
अनुभूति तीर्थमहान, सुवर्णपुरी सोहे,
यह कहान-गुरु वरदान, मंगल मुक्ति मिले ।।

ॐ ह्रीं श्री सुवर्णपुरीतीर्थे सर्वजिनायतनेषु बिराजमान-जिनबिंबेभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा।

कश्मीर सुकेसर ल्याय चंदन सुखकारी,
श्री जिनवरजीको चढ़ाय शांतिसुधा पावे,
अनुभूति तीर्थमहान सुवर्णपुरी सोहे,
यह कहानगुरु वरदान मंगल मुक्ति मिले ।।

ॐ ह्रीं श्री सुवर्णपुरीतीर्थे सर्वजिनायतनेषु बिराजमान-जिनबिंबेभ्यो चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

शुभ शालि अखंडित ल्याय, प्रभुजीके चरण धरूं,
अक्षयपद प्राप्ति काज अखंडित ध्यान करूं,
अनुभूति तीर्थमहान सुवर्णपुरी सोहे,
यह कहानगुरु वरदान मंगल मुक्ति मिले ॥

ॐ ह्रीं श्री सुवर्णपुरीतीर्थे सर्वजिनायतनेषु बिराजमान-जिनबिंबेभ्यो अक्षतान्०

पंचवरणमय दिव्य फूल अनेक कहे,
श्री जिनवर पूजत पाद बहुविध पुण्य लहे,
अनुभूति तीर्थमहान सुवर्णपुरी सोहे,
यह कहानगुरु वरदान मंगल मुक्ति मिले ॥

ॐ ह्रीं श्री सुवर्णपुरीतीर्थे सर्वजिनायतनेषु बिराजमान-जिनबिंबेभ्यो पुष्पं०

फेणी खाजा पकवान, मोदक-सरस बने,
जिन चरणन देत चढ़ाय, दोष क्षुधादि टले,
अनुभूति तीर्थमहान सुवर्णपुरी सोहे,
यह कहानगुरु वरदान मंगल मुक्ति मिले ॥

ॐ ह्रीं श्री सुवर्णपुरीतीर्थे सर्वजिनायतनेषु बिराजमान-जिनबिंबेभ्यो नैवेद्यं०

दीपककी ज्योति जगाय मिथ्या तिमिर नशे,
तव चरनन सन्मुख जाय भव भव रोग टले,
अनुभूति तीर्थमहान सुवर्णपुरी सोहे,
यह कहानगुरु वरदान मंगल मुक्ति मिले ॥

ॐ ह्रीं श्री स्वानुभूतितीर्थे सर्वजिनायतनेषु बिराजमान-जिनबिंबेभ्यो दीपम्०

वर धूप सु दस विधि ल्याय, दस दिशि गंध भरे,
सब कर्म जलावत जाय, मानो नृत्य करे,
अनुभूति तीर्थमहान सुवर्णपुरी सोहे,
यह कहानगुरु वरदान मंगल मुक्ति मिले ॥

ॐ ह्रीं श्री सुवर्णपुरीतीर्थे सर्वजिनायतनेषु बिराजमान-जिनबिंबेभ्यो धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

ले फल उत्कृष्ट महान, जिनवर पद पूजूं,
लहुं मोक्ष परम शुभ-थान, तुम सम नहीं दूजो,
अनुभूति तीर्थमहान सुवर्णपुरी सोहे,
यह कहानगुरु वरदान मंगल मुक्ति मिले ।।

ॐ ह्रीं श्री सुवर्णपुरीतीर्थे सर्वजिनायतनेषु बिराजमान-जिनबिंबेभ्यो फलं० ।

भरि स्वर्णथाल वसु द्रव्य अर्चूं कर जोरि,
प्रभु सुनियो विनती नाथ, कहूं मैं भाव धरि,
अनुभूति तीर्थमहान सुवर्णपुरी सोहे,
यह कहानगुरु वरदान मंगल मुक्ति मिले ।।

ॐ ह्रीं श्री सुवर्णपुरीतीर्थे सर्वजिनायतनेषु बिराजमान-जिनबिंबेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाला

(तोटक)

यह स्वर्णपुरी अति पावन है, मंगल मंगल मंगलकर है ।
यह मुक्तिमार्ग प्रकाशक है, स्वानुभूतितीर्थ अति मंगल है ।।

स्वर्णिम आभा है स्वर्णपुरीकी, स्वर्णिम है इतिहास बना ।
गुरुवरकी अध्यातम वाणीसे, निर्मित यह तीरथधाम महा ।।

सातिशय जिनवरमंदिर है, दिव्यमूरति सीमंधरजिनकी ।
जिनके दर्शनकर जगप्राणी, आतमशांति सुख पाते हैं ।।

विदेही चितार है समवसरण, जहाँ कुंदप्रभुजी पधारे हैं ।
उन्नत मानस्तंभ दिव्य महा, विदेहीनाथ बिराजे हैं ।।

परमागम मंदिर अद्भुत है प्रभु महावीरकी मूरति है ।
कुंदकुंद चरण अभिराम बने, पंच परमागम श्रुतमंदिरमें ।।

पंचमेरु नंदीश्वरधाम बना, भावि जिनवरजी बिराजित है ।
आदिनाथ प्रभु अरु जिनवरवृंद, रत्नजड़ित वचनामृत हैं ।।

स्वाध्यायमंदिर बना अति सुंदर, जहाँ कहानगुरुने वास किया।
पैतालीस वर्षों तक जहाँ गुरुने, आतमका ही ध्यान किया॥

प्रवचनमंडप सुविशाल अहा, गुरु प्रभावनाका स्मारक है।
पौराणिक चित्रावलि अंकित, पंच परमागम हरिगीत रचे॥

अनुभवभीनी वाणी बरसी, मानो अमृत धारा बरसी।
गुरु-वचनामृतसे सारे जगमें, फैली आतमकी हरियाली॥

प्रशममूर्ति मात भगवती, स्वानुभूतिविभूषित रत्न अहो!
ज्ञान वैराग्य भक्तिका संगम है, स्मृतिज्ञान अलौकिक मंगल है॥

जयवंत रहो जयवंत रहो स्वानुभूतितीर्थ जयवंत रहो।
तारणहारे गुरुदेवका यह स्वानुभूतितीर्थ जयवंत रहो॥

ॐ ह्रीं श्री सुवर्णपुरी–अध्यात्मतीर्थे जिनमन्दिरे विराजमान श्री सीमन्धरस्वामी, पद्मप्रभ, शान्तिनाथ, नेमिनाथ आदि जिनेन्द्र; समवसरणे विराजमान श्री सीमन्धर-स्वामी, तत्पादमूल–विराजमान श्री कुन्दकुन्दाचार्यदेव; मानस्तम्भे चतुर्दिक्षु विराजमान श्री सीमन्धरस्वामी; परमागममन्दिरे विराजमान भगवान श्री महावीरस्वामी, श्री समयसार आदि पंचपरमागम, श्री कुन्दकुन्दाचार्य–चरणचिह्न; 'गुरुदेवश्रीके वचनामृत' तथा 'बहिनश्रीके वचनामृत' इति उभयाभ्यां विभूषित पंचमेरुनन्दीश्वरजिनालये विराजमान भगवान श्री आदिनाथ, धातकीखण्ड विदेही भावि तीर्थंकर, जम्बु–भरतस्य भावि श्री महापद्म जिनवर; पंचमेरौ तथा नन्दीश्वर–द्वापंचाशत्-जिनालये विराजमान सर्व शाश्वत जिनेन्द्र; स्वाध्यायमन्दिरे प्रतिष्ठित श्री समयसार—इत्यादि सर्व वीतरागपदेभ्य: पूजनार्थे महाअर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

❖ ❖ ❖ ❖

अर्घावली

आदिनाथ भगवाननो अर्घ

अत्यंत निर्मल पूर्व आठों, द्रव्य एकत्रित करो,
अरि अष्ट हनि गुण अष्ट संयुत शीघ्र मुक्तिरमा वरो,
सौराष्ट्रदेशे स्वर्णपुर पावन सुमंगल ग्राम है,
प्रभु आदिनाथ जिनेश पूजों मोक्षसुखके धाम है ।

ॐ ह्रीँ श्री आदिनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

महावीर भगवान

जलफल वसु द्रव्य मिलाय, अर्घ बनाय महा,
जिनवरपद पूजौं जाय, शिवसुखदाय कहा;
श्रीवीर हरो भव पीर, शिवसुखदायक हो,
मम अरज सुनों गुणधीर, तुम जगनायक हो ।

ॐ ह्रीँ श्री वर्द्धमानजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

पारसनाथ भगवान

शुचि जल फलादिक द्रव्य लेकर, अर्घ उत्तम कीजिये,
भवभ्रमण भंजन हेत प्रभुको पूजि शिवसुख लीजिये;
संसार विषम विदेशवत, कलिकाल वन विकराल है,
तहां भ्रमत भविको सुखद, पारस नाम धाम कृपाल है ।

ॐ ह्रीँ श्री पारसनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

चोवीस जिनेन्द्रनो अर्घ

जल फल आठो शुचिसार ताको अर्घ करों,
तुमको अरपों भवतार, भवतरि मोक्ष वरों;
चौवीसौं श्रीजिनचंद, आनंदकंद सही,
पद जजत हरत भवफंद, पावत मोक्ष मही ।

ॐ ह्रीँ श्रीवृषभादिचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

श्री भावि तीर्थंकरनो अर्घ

जल गंध सुअक्षत पुष्प, शुभ नैवेद्य धरुं,
लइ दीप धूप फल अर्घ, जिनवर पूज करुं;
अहो ! धातकीखंड जिणंद भावी मनहारी,
जंबू–भरते जयवंत शिव मंगलकारी।
(—स्वर्णे वर्ते जयवंत शिव मंगळकारी।)

ॐ ह्रीँ धातकीद्वीप--विदेहक्षेत्रस्थ भावि जिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घं निर्व०

देवेन्द्रकीर्ति भावि विदेही गणधरका अर्घ

पावन जिनका नामस्मरण, मंगल सुखके दाता है,
धन्य धन्य अवतार प्रभु, त्रिभुवन कीर्तन गाता है।
शांति सुधाकरकी शीतल, शीकर भवदुःखहारी है,
देवेन्द्रकीर्ति गणधर–भगवान, चरण–पूजा सुखकारी है।

ॐ ह्रीँ विदेही भावि श्री देवेन्द्रकीर्तिगणधरदेवाय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घं नि०

नंदीश्वरद्वीपनो अर्घ

यह अर्घ कियो निज हेत, तुमको अरपत हों,
'द्यानत' कीनो शिवखेत, भूमि समरपत हों;
नंदीश्वर श्री जिनधाम, बावन पूज करों,
वसुदिन प्रतिमा अभिराम, आनंदभाव धरों।

ॐ ह्रीँ नंदीश्वरद्वीपे द्विपंचाशत् जिनालयेभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

त्रीस चोवीसीनो अर्घ

द्रव्य आठों जु लीना है, अर्घ करमें नवीना है,
पूजतें पाप छीना है, भानमल जोर कीना है;
दीप अढाई सरस राजै, क्षेत्र दश ता विषैं छाजै,
सात शत बीसजिन राजै, पूजतां पाप सब भाजै।

ॐ ह्रीँ श्री पांच भरत ऐरावत दशक्षेत्रसंबंधी तीस चौवीसीके सातसौ बीस जिनेद्रेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

समुच्चय अर्घ

मैं देव श्री अर्हन्त पूजूं, सिद्ध पूजूं चाव सों,
आचार्य श्री उवझाय पूजूं, साधु पूजूं भाव सों,
अर्हन्त–भाषित वैन पूजूं, द्वादशांग रचे गनी,
पूजूं दिगंबर गुरुचरन, शिव हेत सब आशा हनी।

सर्वज्ञभाषित धर्म दशविध दयामय पूजूं सदा,
जजि भावना षोडश रतनत्रय जा विना शिव नहिं कदा;
त्रैलोक्यके कृत्रिम अकृत्रिम चैत्य चैत्यालय जजूं,
पन मेरु नंदीश्वर जिनालय खचर सुर पूजित भजूं।

कैलास श्री सम्मेद श्री गिरनार गिरि पूजूं सदा,
चंपापुरी पावापुरी पुनि और तीरथ सर्वदा;
चौवीस श्री जिनराज पूजूं बीस क्षेत्र विदेह के,
नामावली इक सहस वसु जय होय प्रति शिवगेह के।

दोहा– **जल गंधाक्षत पुष्प चरु, दीप धूप फल लाय;**
सर्व पूज्य पद पूजहूं, बहु विध भक्ति बढाय।

ॐ ह्रीँ भावपूजा, भाववंदना, त्रिकालपूजा, त्रिकालवंदना करवी-कराववी-भावना भाववी, श्री अर्हन्तजी, सिद्धजी,- आचार्यजी, -उपाध्यायजी,- सर्वसाधुजी-पंचपरमेष्ठिभ्यो नमः । प्रथमानुयोग-करणानुयोग-चरणानुयोग-द्रव्यानुयोगेभ्यो नमः। उत्तमक्षमादि दशलक्षणधर्मेभ्यो नमः । सम्यग्दर्शन-सम्यग्ज्ञान-सम्यक्चारित्रेभ्यो नमः । जल विषे, थल विषे, आकाश विषे, गुफा विषे, पहाड विषे, नगर-नगरी विषे, ऊर्ध्वलोक-मध्यलोक-पाताललोक- विषे बिराजमान-कृत्रिम-अकृत्रिम जिन-चैत्यालय जिन-बिंबेभ्यो नमः । विदेहक्षेत्र विद्यमान वीस तीर्थंकरेभ्यो नमः। पांच भरत, पांच ऐरावत-दस क्षेत्र संबंधी त्रीस चोवीसीना सातसो वीस जिनेभ्यो नमः । नंदीश्वरद्वीपसंबंधी बावन-जिनचैत्यालयेभ्यो नमः । सम्मेदशिखर, कैलास,-चंपापुर,-पावापुर आदि तीर्थक्षेत्रेभ्यो नमः । जैनबद्री, मूडबिद्री, राजगृही, शत्रुंजय, तारंगा आदि तीर्थक्षेत्रेभ्यो नमः । श्री चारण ऋद्धिधारी सात परमऋषिभ्यो नमः । इति उपर्युक्तेभ्यः सर्वेभ्यो अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

श्री सीमंधरजिन-आरती

हुं तो आरती उतारुं सीमंधरनाथनी रे;
सीमंधरनाथनी रे त्रिजगराजनी रे। हुं तो० १

पिता श्रेयांस कुळ दीपक देव छो रे,
माता सत्यदेवीना नंदन अहो रे। हुं तो० २

प्रभु वीतरागी शुद्ध ज्ञानघन छो रे;
नाथ हरखे नीरखुं हुं दिव्य चंदलो रे। हुं तो० ३

मुज आत्म चकोर ने चंद्र सांपड्यो रे;
प्रभु उदधि आनंदनो गृह वस्यो रे। हुं तो० ४

नाथ! महिमा न थाय मुझ मुख थकी रे;
पूरण कैवल्य ज्ञानघन जिनपति रे। हुं तो० ५

जन्म सफळ मुज कृत्य दिन आजनो रे;
देव देख्यो त्रिलोकीनाथ जगतनो रे। हुं तो० ६

श्री सीमंधरजिन आरती

जय सीमंधर, जय सीमंधर, जय सीमंधर देवा।
माता तोरी सत्यवती ने पिता श्रेयांस राया;
पुंडरगिरिमें जन्म लिया प्रभु, साक्षात् अरहंतदेवा। जय० १

आप विदेह के हो तीर्थंकर, दिव्यध्वनि के दाता,
भरतक्षेत्रमां धर्मवृद्धि प्रभु! तारा नंदन द्वारा। जय० २

भरतक्षेत्रना भक्तो तारी करें हृदयसें सेवा;
भव भव होजो भक्ति तुमारी ओ देवनके देवा। जय० ३

सुवर्णपुरीमें नाथ पधार्या, दरशन दासने देवा;
भव भवमें प्रभु प्रीत तुमारी, चाहूं चरणमें रहेवा। जय० ४

श्री जिनेन्द्र भगवानकी आरती

धन्य धन्य आज घड़ी कैसी सुखकार है,
सीमंधर दरबार लगा सीमंधर दरबार है।

खुशियां अपार आज हर दिलपे छांई हैं,
दर्शनके हेतु सब जनता अकुलाई है, जनता अकुलाई है;
चारों ओर देखलो भीड बेसुमार है। सीमंधर० १

भक्तिसे नृत्य-गान कोई हैं कर रहे,
आतमसुबोध कर पापोंसे डर रहे, पापोंसे डर रहे;
पल पल पुन्यका भरे भंडार है। सीमंधर० २

जय जयके नादसे गूंजा आकाश है,
छूटेंगे पाप सब निश्चय ये आश है, निश्चय ये आश है;
देखलो 'सौभाग्य' खुला आज मुक्तिद्वार है। सीमंधर० ३

चौवीस तीर्थंकरोनी आरती

अघहर श्री जिनबिंब मनोहर चौवीस जिनका करो भजन
आज दिवस कंचन सम उगियो, जिनमंदिरमें चलो सजन। टेक

न्हवन थापना सहस्रनाम पढ, अष्टविधार्चन पूजा रचन,
आरति अरु जयमाल स्तुति, स्वाध्याय त्रयकाल पठन;
जय जय आरति सुरनर नाचत, अनहद दुंदुभि बाजे बजन;
रत्नजडित कर थाल मनोहर, ज्योति अनूपम धूम्रतजन। अघ० १

ऋषभ, अजित, संभव सुखदाता, अभिनंदन के नमूं चरन,
सुमति, पद्मप्रभ, देव सुपारस, चन्द्रनाथ वपु शुभ्रवरन;
पुष्पदंत, शीतल, श्रेयांस अरु, वासुपूज्य भव तारनतरन,
विमल, अनंत, धर्मजिन, शांति, कुंथु, अरह हर जन्ममरण। अघ० २

मल्लिनाथ, मुनिसुव्रत, नमिजिन, नेमि, पार्श्व हर अष्ट करम,
नाशवंत है उन्नत कर सत, अंतिम सन्मति देव शरन;
समवसरणकी अगणित शोभा, बार सभा उपदेश धरन,
जिन उद्धारक, त्रिभुवन तारक, राव–रंकको है जु शरन। अघ० ३

तीर्थंकर गुण-माल कंठकर, जाप जपो तिन करो कथन;
देव-शास्त्र-गुरु विनय करो, इन तीन रतनका करो जतन। अघ० ४

ॐ जय जिनवरदेवा

ॐ जय जिनवरदेवा, प्रभु जय जिनवरदेवा,
निशदिन देजो हे....जगदीश्वर पदपंकजसेवा.....ॐ

दिव्यानंदी, दिव्यप्रकाशी, दैवी तुज देदार,
रिद्धि-सिद्धि-सुखनिधिना स्वामी, नित्य सुमंगलकार.....ॐ

आज अमारे आंगणे पधार्या जिनवर जयवंता,
खंडधातकी-महाविदेही भावी भगवंता.....ॐ

पूर्णगुणे परिणत परमेश्वर, त्रिलोक-तारणहार,
आवो पधारो त्रिभुवनतीरथ! आतमना आधार !.....ॐ

कृपा करो हे जिनवर ! मारा, थाय पूरां सौ काज,
सत्वर शिवपद दो सेवकने, चरण पूजूं जिनराज !.....ॐ

शान्तिपाठ

(वसंततिलकम्)

सीमंधरादिभवशान्तिकरा जिनेन्द्रा;
सर्वार्थसाधनगुणप्रणिधानरूपा;
तेभ्योऽर्पयामि भवकारणनाशबीजं,
पुष्पांजलि विमलमंगलकामरूपम् । (पुष्पांजलिं)

शान्तिपाठ

(शान्तिपाठ बोलती वखते बंने हाथथी पुष्पवृष्टि करवी)

(दोधक छंद)

शान्तिजिनं शशिनिर्मलवक्त्रं, शीलगुणव्रतसंयमपात्रम्,
अष्टशतार्चितलक्षणगात्रं, नौमि जिनोत्तमम्बुजनेत्रम्;
पंचममीप्सितचक्रधराणां, पूजितमिन्द्रनरेन्द्रगणैश्च,
शान्तिकरं गणशान्तिमभीप्सु; षोडशतीर्थंकर प्रणमामि ।
दिव्यतरुः सुरपुष्पसुवृष्टिः, दुन्दुभिरासनयोजनघोषौ,
आतपवारणचामरयुग्मे, यस्य विभाति च मंडलतेज;
तं जगदर्चितशान्तिजिनेन्द्रं, शान्तिकरं सिरसा प्रणमामि,
सर्वगणाय तु यच्छतु शांतिं, मह्ममरं पठते परमां च ।

(वसंततिलका छंद)

येऽभ्यर्चिता मुकुटकुंडलहाररत्नै;
शक्रादिभिः सुरगणैः स्तुतपादपद्मा;
ते मे जिनाः प्रवरवंशजगत्प्रदीपा;
तीर्थंकराः सतत शान्तिकरा भवन्तु ।

(इन्द्रवजा)

संपूजकानां प्रतिपालकानां, यतीन्द्रसामान्यतपोधनानाम्;
देशस्य राष्ट्रस्य पुरस्य राज्ञः करोतु शान्ति भगवन् जिनेन्द्रः ।

(स्रग्धरावृतम्)

क्षेमं सर्वप्रजानां प्रभवतु प्रभवतु बलवान्, धार्मिको भूमिपाल;
काले काले च सम्यग्वर्षतु मघवा व्याधयो यान्तु नाशम्;
दुर्भिक्षं चौरमारी क्षणमपि जगतां मास्मभूज्जीवलोके,
जैनेन्द्रं धर्मचक्रं प्रभवतु सततं सर्वसौख्यप्रदायि । ७

(अनुष्टुप)

प्रध्वस्तघातिकर्माणः केवलज्ञानभास्करा;
कुर्वन्तु जगतः शांतिं वृषभाद्या जिनेश्वरा । ८

||प्रथमं करणं चरणं द्रव्यं नमः ||

(अथेष्ट प्रार्थना--मंदाक्रान्ता)

शास्त्राभ्यासो जिनपतिनुतिः संगतिः सर्वदार्यैः;
सद्वृतानां गुणगणकथा दोषवादे च मौनम्;
सर्वस्यापि प्रियहितवचो भावना चात्मतत्त्वे,
सम्पद्यंतां मम भवभवे यावदेतेऽपवर्गः । ९

(आर्यावृतम्)

तव पादौ मम हृदये, मम हृदयं तव पदद्वये लीनम्;
तिष्ठतु जिनेन्द्र! तावत् यावन्निर्वाणसम्प्राप्तिं । १०
अक्खरपयत्थहीणं मत्ताहीणं च जं मए भणियं;
तं खमउ णाणदेव य मज्झवि दुःकखक्खयं दिंतु । ११
दुःक्ख–खओ कम्म-खओ समाहिमरणं च बोहिलाहो य;
मम होइ जगद-बंधव तव जिणवर चरणसरणेण । १२

(प्रार्थना-आर्या)

त्रिभुवनगुरो! जिनेश्वर! परमानन्दैककारणं कुरुष्व;
मयि किंकरेऽत्र करुणां यथा तथा जायते मुक्तिः । १३
निर्विण्णोहं नितरामर्हन् बहुदुकखया भवस्थित्या;
अपुनर्भवाय भवहर कुरु करुणामत्र मयि दीने । १४

उद्धार मां पतितमतो विषमाद् भवकूपतः कृपां कृत्वा;
अर्हन्नलमुद्धरणे त्वमसीति पुनः पुनर्वच्मि। १५

त्वं कारुणिकः स्वामी त्वमेव शरणं जिनेश ! तेनाहं;
मोहरिपुदलितमानं फूत्करणं तव पुरः कुर्वे। १६

ग्रामपतेरपि करुणा परेण केनाप्युपद्रुते पुंसि;
जगतां प्रभो ! न किं तव, जिन ! मयि खलु कर्मभिः प्रहते। १७

अपहर मम जन्म दयां, कृत्वा चेत्येकवचसि वक्तव्यं;
तेनातिदग्ध इति मे देव! बभूव प्रलापित्वं। १८

तव जिन चरणाब्जयुगं करुणामृतशीतलं यावत्;
संसारतापतप्तः करोमि हृदि तावदेव सुखी। १९

जगदेकशरण भगवन्! नौमि श्रीपद्मनंदितगुणौध;
किं बहुना कुरु करुणामत्र जने शरणमापन्ने। २०

॥ परिपुष्पांजलि क्षिपेत् ॥

❋ ❋ ❋

शांतिपाठ

शांतिनाथ मुख शशि उनहारी, शीलगुणव्रतसंयमधारी;
लखन एक सौ आठ विराजै, निरखत नयन कमलदललाजै।

पंचम चक्रवर्ती पदधारी, सोलम तीर्थंकर सुखकारी;
इन्द्र नरेन्द्र पूज्य जिननायक, नमों शांतिहित शांतिविधायक।

दिव्य विटप पुहुपनकी वरषा, दुन्दुभि आसन वाणी सरसा;
छत्र चमर भामंडल भारी, ये तुव प्रातिहार्य मनहारी।

शांति जिनेश शांति सुखदाई, जगतपूज्य पूजौं शिर नाई;
परम शांति दीजै हम सबको, पढैं तिन्हें पुनि चार संघको।

(वसंततिलका)

पूजें जिन्हें मुकुट हार किरीट लाके,
इन्द्रादि देव अरु पूज्य पदाब्ज जाके;
सो शांतिनाथ वरवंश जगत्प्रदीप,
मेरे लिये करहिं शांति सदा अनूप।

(दोहा)

घातिकर्म जिन नाश करि पायो केवलराज,
शांति करो सब जगतमें वृषभादिक जिनराज।

विसर्जन

ज्ञानतोऽज्ञानतो वापि शास्त्रोक्तं न कृतं मया;
तत्सर्वं पूर्णमेवास्तु त्वत्प्रसादाज्जिनेश्वर। १

आह्वानं नैव जानामि नैव जानामि पूजनं;
विसर्जनं न जानामि क्षमस्व परमेश्वर। २

मंत्रहीनं क्रियाहीनं द्रव्यहीनं तथैव च
तत्सर्वं क्षम्यतां देव रक्ष रक्ष जिनेश्वर। ३

मंगलं भगवान् वीरो मंगलं गौतमो गणी;
मंगलं कुंदकुंदार्यो जैनधर्मोऽस्तु मंगलम्। ४

सर्वमंगल मांगल्यं, सर्वकल्याणकारकं;
प्रधानं सर्वधर्माणां, जैनं जयतु शासनम्। ५

(अहीं नव वार णमोकारमंत्रनो जाप जपवो ।)